226.1
खंडे/रस./भू

भूतडामरतन्त्रम्

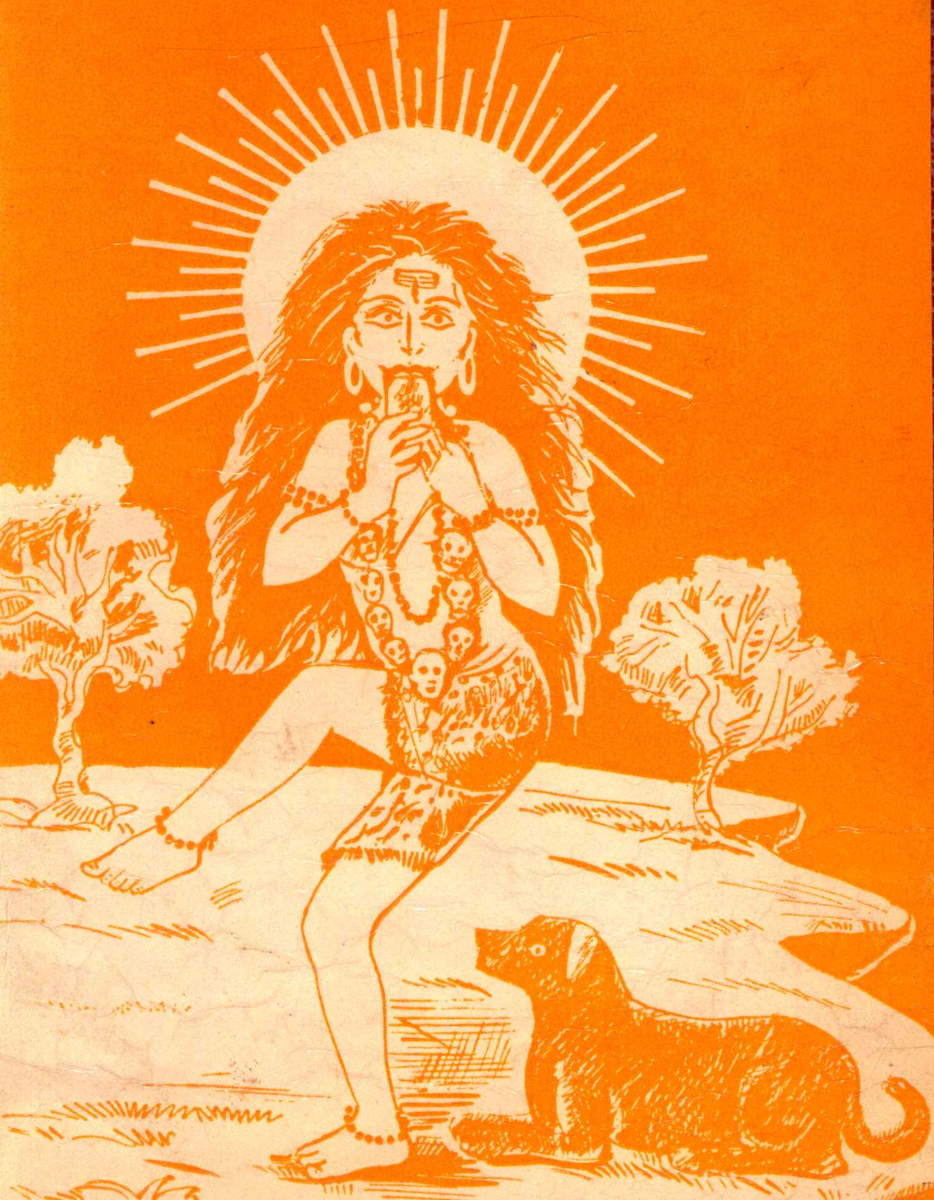

एस० एन० खण्डेलवाल

॥ श्रीः ॥

चौखम्बा सुरभारती ग्रन्थमाला

२७८

भूतडामरतन्त्रम्

हिन्दीव्याख्योपेतम्

हिन्दीव्याख्याकार

एस० एन० खण्डेलवाल

सम्पादक

डॉ० ब्रह्मानन्द त्रिपाठी

साहित्य-आयुर्वेद-ज्यौतिष-आचार्य

एम. ए., पी-एच्. डी., डी. एस-सी. ए-वाइ.

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

वा रा ण सी

प्रकाशक

चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन

(भारतीय संस्कृति एवं साहित्य के प्रकाशक तथा वितरक)

के० ३७/११७, गोपालमन्दिर लेन

पो० बा० नं० ११२९, वाराणसी २२१००१

दूरभाष : ३३३४३१

प्रथम संस्करण १९९६

मूल्य ५०-००

अन्य प्राप्तिस्थान

226.1
खंडे।एस॰।भू

चौखम्बा संस्कृत प्रतिष्ठान

३८ यू. ए., बंगलो रोड, जवाहरनगर

पो० बा० नं० २११३

दिल्ली ११०००७

दूरभाष : २३६३९१

*

प्रधान वितरक

चौखम्बा विद्याभवन

चौक (बनारस स्टेट बैंक भवन के पीछे)

पो० बा० नं० १०६९, वाराणसी २२१००१

दूरभाष : ३२०४०४

मुद्रक

फूल प्रिण्टर्स

वाराणसी

सम्पादकीय

शब्दनिरुक्ति—**'भूत'** शब्द प्राणिमात्र, दिव्य, लौकिक भूत, प्रेत, पिशाच, दानव, पंचमहाभूत, यम, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का वाचक है। **'डामर'** का अर्थ है—डरावना। **'तन्त्र'** शब्द इन अर्थों का वाचक है—दैवतन्त्र, स्वतन्त्र तथा परतन्त्र। तन्त्रसंहिता के विषय हैं—देवपूजा, अतिमानवीय शक्ति प्राप्त करना, जादू-टोना, मन्त्र-तन्त्र, गण्डा, ताबीज आदि। इन अर्थों का वाचक है—**'भूतडामरतन्त्र'**।

ग्रन्थ-परिचय—यह ग्रन्थ कितना प्राचीन है, कब किसने लिखा, ये बातें स्पष्ट रूप से कह पाना कठिन हैं; तथापि समाज इस प्रकार के ग्रन्थों को जो आज ढूंढा करता है, उपासना करने के लिए प्रयत्नशील रहता है, उनके मनः-सन्तोष के लिए एस० एन० खण्डेलवालजी का यह एक स्तुत्य प्रयास है। इसके पहले भी इनकी तन्त्र-सम्बन्धी दो पुस्तकें नीलसरस्वतीतन्त्र तथा सिद्धनागार्जुन-तन्त्र प्रकाशित हो चुकी हैं। इन प्रकाशनों में इनका दृष्टिकोण लोकोपचार मात्र रहा है। सम्पादन का भार आपने मुझ पर छोड़ा था, अतः आज उपलब्ध होने वाले इसके अन्य संस्करणों में प्रस्तुत संस्करण सर्वाधिक शुद्ध हैं। जो अशुद्धियाँ अब भी प्रतीत होंगी वे तान्त्रिक पाठों की परम्परा के कारण रह गयी हैं। इस ग्रन्थ में १६ पटल हैं। इनके प्रमुख विषयों का उल्लेख विषय-सूची में है। तन्त्र की सिद्धि गुरु के निर्देशों और उपासक की श्रद्धा-भक्तिपूर्ण तत्परता पर निर्भर करती है।

श्रावण शुक्ल १५
संवत् २०५३ वि०

विद्वद्विधेय—
ब्रह्मानन्द त्रिपाठी

विषय-सूची

विषय	पृष्ठांक
प्रथम पटल	१
भैरव-भैरवी संवाद	१
सिद्धिप्राप्ति-प्रकार	१
द्वितीय पटल	४
मारण प्रयोग	४
रस-रसायन-रत्नप्राप्ति प्रकार	५
तृतीय पटल	८
सुन्दरी-मन्त्रसाधना	८
मन्त्रोद्धारवर्णन	८
मुद्रामन्त्रवर्णन	९
भूतिनी-साधन	११
चतुर्थ पटल	१६
श्मशानवासिनी-साधन	१६
विविध मुद्राएँ	१९
पञ्चम पटल	२२
चण्डकात्यायनी-साधन	२२
कात्यायनी मन्त्र	२४
भूतकात्यायनी मन्त्र	२६
षष्ठ पटल	३१
महामण्डलवर्णन	३१
क्रोधमन्त्रवर्णन	३४
क्रोधसाधनी मुद्रा	३७
क्रोधपति मन्त्र	४३
सप्तम पटल	४६
देवतामारण-प्रकार	४६
भैरवमारण-प्रकार	४८
महाकालमारण-प्रकार	४८
अष्टम पटल	५०
चेटिकासाधन-विधि	५०
वीरगणसिद्धि	५०
नवम पटल	५३
भूतिनी-साधन	५३
दशम पटल	५७
ब्रह्मादिमारण	५७
अप्सर:साधन	६२
एकादश पटल	६४
यक्षिणी-साधन	६४
भेद तथा मन्त्र	६५
क्रोधांकुशी मुद्रा	६९
द्वादश पटल	७२
नागिनी-साधन	७२
आठ नागिनियों की सिद्धि	७२
पूजनविधि	७६
त्रयोदश पटल	७८
किन्नरी-साधन	७८
६ प्रकार की किन्नरियाँ	७८
उपासनविधि	७९, ८०
चतुर्दश पटल	८२
परिषन्मण्डल-वर्णन	८२
क्रोधभैरव-पूजन	८५
मुद्राविधियाँ	८५
पञ्चदश पटल	८७
यक्षसिद्धि-विधान	८७
अपराजित मन्त्र	८७
षोडश पटल	९०
योगिनी-साधना	९०
साधनाविधि	९०
श्यामा-ध्यान	९२
महाविद्यापूजनविधि	९३
कामेश्वरी-वर्णन	९४
उपासना काल	१००

॥ श्रीः ॥

भूतडामरतन्त्रम्

प्रथमं पटलम्

ॐ नमः क्रोधभैरवाय

व्योमवक्त्रं महाकायं प्रलयाग्निसमप्रभम् ।
अभेद्यभेदकं स्तौमि भूतडामरनामकम् ॥ १ ॥

आकाश रूपी शरीर वाले, महाकाय, प्रलयकालीन अग्नि के समान देदीप्यमान, अभेद्य का भी भेदन करने वाले भूतडामर नामक उन्मत्तभैरव की मैं वन्दना करता हूँ ॥ १ ॥

त्रैलोक्याधिपतिं रौद्रं सुरसिद्धनमस्कृतम् ।
उन्मत्तभैरवं नत्वा पृच्छत्युन्मत्तभैरवी ॥ २ ॥

त्रैलोक्य के अधिपति, देवता तथा सिद्धों द्वारा सेवित एवं नमस्कृत रुद्ररूपी उन्मत्त भैरव को प्रणाम करके देवी उन्मत्तभैरवी उनसे जिज्ञासा करती हैं ॥ २ ॥

भैरव्युवाच

कथं यक्षा नरा नागाः किन्नराः प्रमथादयः ।
जम्बूद्वीपे कलौ सिद्धिं यच्छन्त्येता वराङ्गनाः ॥ ३ ॥

भैरवी कहती हैं—हे भैरव ! इस कलिकाल में जम्बूद्वीप में किस प्रकार से यक्ष, मनुष्य, नाग, किन्नर, प्रमथ तथा वरांगनाएँ (अप्सराएँ) सिद्धि प्राप्त करते हैं ॥ ३ ॥

येऽन्ये पापरता मिथ्यावादिनः शीलवर्जिताः ।
सालस्याः पूरुषास्तेषां साहाय्यं कुरु त्वं स्वयम् ॥ ४ ॥

इनके अतिरिक्त जो पुरुष पापकर्मों में लगे हैं, झूठ बोलते हैं, चरित्रहीन हैं तथा आलसी हैं, उनकी सहायता आप स्वयं कीजिए ॥ ४ ॥

केनोपायेन नश्यन्ति कलौ दुष्टाघराशयः ।
लभ्यन्ते सिद्धयः सर्वा मोक्षपद्धतयः शुभाः ।
सिद्धयोऽप्यणिमाद्याश्च महापातकनाशिकाः ॥ ५ ॥

कलियुग में किस उपाय द्वारा अत्यन्त दुर्जय पापसमूह का नाश किया

जाता है एवं किस उपाय द्वारा समस्त मंगल देने वाली अभिलषित सिद्धि, मोक्ष तथा पापराशिनाशक अणिमादि आठों सिद्धियों की प्राप्ति होती है ? ॥ ५ ॥

अन्यान्नाशनतः पापमन्यस्त्रीगमनादिजम् ।
कथं नश्यन्ति देवेश ! हेलया नरकं तमः ॥ ६ ॥

हे देवेश ! किस प्रकार से अन्य जाति के यहाँ अन्न भोजन करने का पाप तथा परस्त्रीगमन-जनित पाप सरलता से नष्ट होता है और नरक तथा अन्धकार से परित्राण मिलता है ? ॥ ६ ॥

चन्द्रसूर्यप्रभो भूत्वा तिष्ठेद्रुद्रपुरे चिरम् ।
सुरसिद्धसर्पभूतयक्षगुह्यकनायिकाः ॥ ७ ॥

किस प्रकार देव, सिद्ध, सर्प, भूत, यक्ष, गुह्यक तथा नायिका प्रभृति चन्द्र-सूर्य के समान तेजयुक्त होकर रुद्र के धाम में चिरकाल हेतु अवस्थान करने का अधिकार प्राप्त करते हैं ? ॥ ७ ॥

दूरादागत्य कामार्त्ता बलादालिङ्गयन्ति कम् ।
ब्रह्मेशजिष्णुप्रमुखा मारिता वा कथं प्रभो ! ।
पुनः केन प्रकारेण मृता जीवन्ति निर्जराः ॥ ८ ॥

किस उपाय का अवलम्बन करने से कामातुरा स्त्री सुदूरवर्त्ती स्थान से आकर साधक का बलपूर्वक आलिंगन करती है ? प्रभो ! कैसे ब्रह्मा, शिव, इन्द्र प्रभृति प्रमुख देवगणों को भी नष्ट किया जा सकता है ? मृत व्यक्ति कैसे पुनर्जीवन प्राप्त करके अजर-अमर हो सकता है ? कृपापूर्वक मुझे इसका उपदेश करें ॥ ८ ॥

श्रुत्वैतद्वल्लभावाक्यमुन्मत्तभैरवोऽसकृत् ।
सन्तुष्टो भैरवीं प्राह सर्वं विनयपूर्वकम् ॥ ९ ॥

भगवान् उन्मत्तभैरव अपनी वल्लभा के इन वाक्यों को बार-बार सुनकर भैरवी देवी से सन्तुष्ट होकर विनम्रतापूर्वक उत्तर देते हैं ॥ ९ ॥

उन्मत्तभैरव उवाच

क्रोधाधिपं व्योमवक्त्रं वज्रपाणिं सुरान्तकम् ।
वक्ष्ये नत्वा ततस्तत्र भूपतिं भूतडामरम् ॥
सर्वपापक्षयकरं दुःखदारिद्र्यघातकम् ।
सर्वरोगक्षयकरं सर्वविघ्नविनाशनम् ॥
महाप्रभावजननं दमनं दुष्टचेतसाम् ।
महाचमत्कारकरं स्थित्युत्पत्तिलयात्मकम् ।
ज्ञानमात्रेण देवेशि ! भुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ १० ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—भैरवी ! मैं क्रोधपति, गगनमुख, वज्रहस्त, देवगणविनाशक, भूपति भूतडामर को नमस्कार करके इस रहस्य का उद्घाटन करता हूँ। इससे समस्त पापों का क्षय होता है, दुःख एवं दरिद्रता समाप्त होती है। रोगों का नाश होता है, विघ्न नष्ट हो जाते हैं। महाप्रभाव की वृद्धि होती है और दुष्टचित्त-समूह का दमन होता है। यह भूतडामर तन्त्र अत्यन्त चमत्कारी है। इसके द्वारा प्राप्त शक्ति से सृष्टि, स्थिति तथा संहार सम्भव है। इसके जानने मात्र से इस लोक में विविध भोग-वस्तुओं के साथ-साथ अन्त में मुक्ति प्राप्त होती है ॥ १० ॥

तव स्नेहान्महादेव ! कथ्यतेऽकथ्यमद्भुतम् ।
यत् सुरैर्दुर्लभं स्वर्गे मर्त्ये मर्त्यैर्मुमुक्षुभिः ॥
नागलोके तथा नागैस्तच्छृणुष्व मम प्रिये ! ।
यस्य ज्ञानं विना क्वापि नारीणां निग्रहो भवेत् ।
यक्षिण्यो नैव गच्छन्ति सिद्धिमिष्टां श्रृणुष्व तत् ॥ ११ ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रे प्रथमं पटलम् ।

महादेवी ! मैं तुम्हारे स्नेह के वशीभूत होकर इस अति गोपनीय तथा अद्भुत विषय का उपदेश करता हूँ। यह स्वर्ग में देवगण के लिए, मृत्युलोक में मुमुक्षु मनुष्यों के लिए तथा नागलोक में नागों के लिए भी दुर्लभ है। हे प्रिये ! सुनो। इसे न जानने से यक्षिणी भी अभीष्ट सिद्धि प्राप्त नहीं कर सकती और नारीगण का भी निग्रह नहीं होता ॥ ११ ॥

भूतडामर महातन्त्र का प्रथम पटल समाप्त हुआ।

द्वितीयं पटलम्

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि सुगोप्यं मनुमुत्तमम् ।
सुराणामथ भूतानां मारणं येन सिद्ध्यति ।। १ ।।

मैं अति गोपनीय मन्त्र का उपदेश कर रहा हूँ, जिसके द्वारा देवता एवं भूतगण का भी मारण कर्म सिद्ध हो जाता है ।। १ ।।

विषं ॐ वज्रज्वालेन हनयुग्मं ततः परम् ।
सर्वभूतान् ततः कूर्च्चमस्त्रान्तं मनुमीरितम् ।।
अस्य विज्ञानमात्रेण क्रोधेशाद्रोमकूपतः ।
वज्रज्वालाः प्रजायन्ते शुष्यन्ति प्रमथादयः ।
ब्रह्मेशजिष्णुप्रमुखा नीताः स्युर्यमशासनम् ।। २-३ ।।

'ॐ वज्रज्वाले हन हन सर्वभूतान् हुं फट्' इस मन्त्र को जानने मात्र से क्रोधभैरव के रोमकूप से वज्रज्वाला प्रकट होती है । प्रमथादि भूतगण शुष्क हो जाते हैं और ब्रह्मा, महादेव, इन्द्रादि प्रमुख देवगण भी यमराज (मृत्यु) के अधीन हो जाते हैं ।। २-३ ।।

ततः सविस्मयं प्राहू रुद्राद्या क्रोधभूपतिम् ।
वर्तमानेऽत्र समये नामीषां निग्रहं कुरु ।
सर्वभूताश्च भूतिन्यः करिष्यन्ति भवद्वचः ।। ४ ।।

जब क्रोधभैरव ने उन्मत्तभैरवी से इस प्रकार कहा तब देवगण (रुद्रादि) विस्मित होकर कहने लगे — हे भैरव ! इस समय आप इनका निग्रह न करें । समस्त भूतगण एवं पृथ्वी आपके वाक्य का प्रतिपालन करेगी ।। ४ ।।

विज्ञानाकर्षिणी मन्त्रं भाषतेऽतोऽतिविस्मिता ।
तारं ब्रह्ममुखे प्रोच्य शरयुग्मान्तमीरितम् ।।
अस्य भाषितमात्रेण वज्रज्वाला विनिःसृताः ।
मृतसञ्जीवनी विद्या मृतप्राणप्रदायिनी ।
भूतानां दुरितध्वंसो भवेदस्य प्रभावतः ।। ५-६ ।।

अब अत्यन्त विस्मयप्रद विज्ञानाकर्षण मन्त्र कहा जाता है । 'ॐ ब्रह्ममुखे शर शर फट्' । इसका उच्चारण करते ही वज्रज्वाला निकल पड़ती है । यह है मृतसंजीवनी विद्या । इससे मृतक प्राणी जीवित हो जाता है । इसके प्रभाव से भूतादि का भय नष्ट हो जाता है ।। ५-६ ।।

अथापराजितानाथो नाथपादौ प्रगृह्य च ।

वन्दयित्वा च शिरसा त्राता त्वं भगवान् परः ।
त्राहि मां भूतनिचयं जम्बूद्वीपे कलौ युगे ॥ ७ ॥

तदनन्तर भूतनाथ उन्मत्तभैरव का पैर पकड़ कर नमस्कार करके कहे कि आप परित्राता तथा षड् ऐश्वर्ययुक्त प्रधान पुरुष हैं। इस कलियुग में जम्बूद्वीप के प्राणिवर्ग का तथा मेरा रक्षण करें ॥ ७ ॥

रसं रसायनं सौख्यं स्वर्णवैदूर्यमौक्तिकम् ।
हंसेन्दुकान्तादिमणिगन्धवस्त्रञ्च काञ्चनम् ।
भोजनं कुसुमं क्षेमं वरं दास्याम ईप्सितम् ॥ ८ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं — रस, रसायन, सुखभोग, सुवर्ण, नीलकान्तमणि, मुक्ता, उत्कृष्ट वस्तु, चन्द्रकान्त आदि मणि, गन्धद्रव्य, वस्त्र, भोजन, पुष्प, कुशल आदि अभीष्ट वर हम तुम्हें देंगे ॥ ८ ॥

भूतिन्यश्चेटिकाः क्रोधजापिनां चेटका वयम् ।
राजा हि तस्करभयं जरानिष्टाघसम्भवम् ।
भूतप्रेतपिशाचादीन्नाशयामः प्रयत्नतः ॥ ९ ॥

जो क्रोधभैरव के मन्त्र का जप करते हैं—मैं उनका भृत्य हूँ और भूतिनी-गण उनकी दासी हैं। उनका जरा (बुढ़ापा) अनिष्ट तथा पापजनित भय, राजा एवं तस्करभय, भूत-प्रेत-पिशाचादि समस्त अशुभों को मैं यत्नपूर्वक नष्ट कर देता हूँ ॥ ९ ॥

यदि सिद्धिं न यच्छन्ति भूतिन्यः साधकं प्रति ।
स्फोटयामि तदा नूनं क्रोधवज्रेण मूर्धनि ।
क्वचिदग्नौ महाघोरे नरके पातयामि च ॥ १० ॥

यदि ऐसे साधक को भूतिनी, यक्षिणी, पिशाच आदि सिद्धि नहीं देती तब मैं तत्क्षण निश्चित रूप से उनके मस्तक को अपने क्रोधवज्र द्वारा फाड़ देता हूँ, अथवा उन भूतिनियों आदि को अग्नि में किंवा महाघोर नरक में भेज देता हूँ ॥ १० ॥

एवमस्त्विति ताः प्राहुर्विस्मिताः क्रोधभूपतिम् ॥ ११ ॥

महादेव आदि देवगण विस्मित होकर क्रोधभैरव से कहते हैं—आपने जो कुछ कहा है, वही हो ॥ ११ ॥

ततो नृणां हितार्थाय प्रमथाद्युपकारकम् ।
क्रोधराजः पुनः प्राह मृतसञ्जीवनीमनुम् ॥ १२ ॥

तदनन्तर क्रोधभैरव ने संसार के हित के लिए पुनः प्रमथादि का उपकार करने वाले संजीवनी मन्त्र का उपदेश दिया ॥ १२ ॥

पञ्चरश्मि समुद्धृत्य सङ्घट्टेति द्विधा पदम् ।
अस्य भाषितमात्रेण मूर्च्छिता भूतदेवताः ।
स्तम्भिता वेपमानाश्च उत्तिष्ठन्त्यतिविह्वलाः ॥ १३ ॥

'ॐ संघट्ट-संघट्ट मृतान् जीवय स्वाहा' । इस मन्त्र का उच्चारण करने मात्र से भूतादि देवता मूर्च्छित, स्तम्भित, कम्पित तथा विह्वल हो जाते हैं ॥ १३ ॥

अथ प्राह महादेवो भूपतिं तं मुहुर्मुहुः ।
क्रोधाधिपं वज्रपाणिं हित्वा त्राता न विद्यते ॥ १४ ॥

तदनन्तर महादेव क्रोधभैरव से पुनः-पुनः कहने लगे कि वज्रपाणि क्रोधभैरव के अतिरिक्त और कोई संसार का रक्षक नहीं है ॥ १४ ॥

अथोवाचाशनिधरो माभैर्माभैर्महेश्वरम् ।
तवान्येषाञ्च देवानां हितार्थं भूतनिग्रहम् ।
करिष्यामि कलौ जम्बूद्वीपस्थानां नृणामपि ॥ १५ ॥

तदनन्तर वज्रपाणि क्रोधभैरव महादेव से कहते हैं कि भयभीत न हो, भयभीत न हो; अन्य देवगण के, आपके तथा जम्बूद्वीप में स्थित मनुष्यों के हित के लिए मैं कलियुग में भूतनिग्रह करूँगा ॥ १५ ॥

रक्षास्मानसकृत् प्राहुः प्रमथाश्चाप्सरोऽङ्गनाः ।
नागिन्यो यक्षकामिन्यः क्रोधेशं प्रणिपत्य च ॥ १६ ॥

प्रमथगण, अप्सराएँ, नागिनियाँ, यक्षिणियाँ प्रभृति क्रोधभैरव को प्रणाम करके पुनः-पुनः कहते हैं—अब हमारी रक्षा करो ॥ १६ ॥

अथ वज्रधरः प्राह भैरवो रोमहर्षणः ।
सुन्दरि ! त्रिपुरे ! भद्रकालि ! भैरवचण्डिके ! ॥
मज्जापिनां नृणां यूयमुपस्थानं करिष्यथ ।
स्वर्णाद्याकाङ्क्षितान्नानि जापिनेऽपि प्रदास्यथ ॥ १७ ॥

तदनन्तर कुलिषपाणि लोमहर्षण क्रोधभैरव कहते हैं—'सुन्दरी ! त्रिपुरा ! भद्रकाली ! भैरवचण्डिका ! तुम सभी मेरा जप करनेवाले साधकों की उपासना करो और उन्हें स्वर्ण, अभिलषित भोज्यवस्तु आदि प्रदान करो ॥ १७ ॥

यक्षिण्योऽप्सरो देवकन्यका नागकन्यकाः ।
दास्यामो देवदेवेश ! निश्चितं क्रोधजापिनः ॥
करिष्याम उपस्थानं दास्यामः प्रार्थितं धनम् ।
यदि कुर्मोऽन्यथा नष्टा भवामः सकुलं प्रभो ! ॥
सर्वकर्म करिष्यामो दासत्वं क्रोधजापिनाम् ।

यद्यन्यथा करिष्यामो भगवान् मूर्ध्नि दारयेत् ।
शतधा क्रोधवज्रेण नरके वा निपातयेत् ।। १८-२० ।।

अब यक्षिणी, देवकन्या तथा नागकन्या कहने लगीं—'हे देवदेवेश ! हम आपके उपासकों की सेवा करेंगी तथा उन्हें प्रार्थित धन भी प्रदान करेंगी। प्रभो ! यदि हमलोग आपकी बातें न माने, तब हमारा वंश सहित विनाश हो जाये। जो क्रोधभैरव के मन्त्र की उपासना करते हैं, हमलोग उनकी दासी बनकर उनके समस्त कार्यों को करेंगी। यदि हमलोग आपकी आज्ञा का उल्लंघन करें, उस स्थिति में आप हमारा मस्तक अपने क्रोधवज्र से सैकड़ों टुकड़ों में विदीर्ण करें और हमें नरक में डालें ।। १८-२० ।।

साध्वित्युक्त्वा वज्रपाणिः पुनः प्राह सुरानिति ।
करिष्यथेत्युपस्थानं नराणां क्रोधजापिनाम् ।
वैदूर्यादिमणीन् स्वर्णमुक्ताद्रव्याणि दास्यथ ।। २१ ।।

वज्रधारी क्रोधभैरव देवताओं से कहते हैं कि तुम्हारा भला हो, हे नायिकागण ! जो मनुष्य क्रोधभैरव के मन्त्र का जप करते हैं, तुमलोग उन्हें नीलकान्तमणि तथा स्वर्ण, मोती इत्यादि द्रव्य प्रदान करो ।। २१ ।।

एवमस्त्विति तं नत्वा क्रोधराजं सुरान्तकम् ।
गता आज्ञां शिरः कृत्वा स्वस्थानं यक्षनायिकाः ।। २२ ।।

यक्षनायिकाओं ने 'ऐसा ही हो', कहकर सुर-असुर का ध्वंस करनेवाले क्रोधभैरव को प्रणाम करके उनका आदेश शिरोधार्य करके अपने-अपने लोकों के लिए प्रस्थान किया ।। २२ ।।

तेनेष्टसिद्धिदाः सर्वा जम्बूद्वीपे कलौ युगे ।। २३ ।।

इति भूतडामरमहातन्त्रे द्वितीयं पटलम् ।

इस प्रकार कलिकाल में जम्बूद्वीप के निवासियों को नायिकागण सिद्धि प्रदान करती हैं ।। २३ ।।

भूतडामर महातन्त्र का द्वितीय पटल समाप्त हुआ ।

तृतीयं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

भगवन् ! सुन्दरीमन्त्रसाधनं वद मे प्रभो ! ।
मन्त्रोद्धारं तथा मुद्रामर्चनं जपपद्धतिम् ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं–भगवन् ! प्रभो ! आप कृपया सुन्दरी मन्त्रसाधना, मन्त्रोद्धार मुद्रा तथा अर्चन एवं जप पद्धति का उपदेश कीजिए ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरव उवाच

एकवृक्षे देवगेहे वने वज्रधरालये ।
निम्नगासङ्गमे वापि पितृभूमावथापि वा ।
सिध्यन्ति भूतभूतिन्यो नृणामिष्टफलप्रदाः ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—तरुतल (पेड़ के नीचे), देवालय, वन, शिवमन्दिर, नदीसंगमस्थल तथा श्मशान में उपासना करने से भूत-भूतिनी आदि सिद्ध होकर मनुष्य को वांछित फल देती हैं ॥ २ ॥

मन्त्रोद्धारं प्रवक्ष्यामि यथावदवधारय ।
आदिबीजं समुद्धृत्य महापदमनन्तरम् ।
भूतशब्दात् कुलपदं सुन्दरीकूर्चसंयुतम् ॥
अनादिबीजमुच्चार्य ततो विजयसुन्दरीम् ।
ततो रुद्रवधूबीजं कलायुक्तं द्वितीयकम् ॥
आदिबीजं समुद्धृत्य विमलेति पदन्ततः ।
सुन्दरीति पदं पाशः सविसर्गस्तृतीयकः ॥
ब्रह्मबीजं समुद्धृत्य सुन्दरीपदमुद्धरेत् ।
षडक्षरो मनुः प्रोक्तः सकूर्चयुगलो मतः ॥
हालाहलं समुद्धृत्य मनोहरी पदन्ततः ।
सुन्दरी धीः समायुक्तः पञ्चमोऽयं महामनुः ॥
बहुरूपिणमाभाष्य भूषणेति पदन्ततः ।
सुन्दरीपदमाभाष्य कामबीजं परो मनुः ॥
हालाहलं समादाय ततो धवलसुन्दरी ।
ततः प्राथमिकं बीजं सविसर्गन्तु सप्तमः ॥
विषाच्चक्षुर्मधुपदं ततो मत्तपदं लिखेत् ।
सुन्दरीपदतो वह्निजाया चण्डिकयान्विता ॥ ३ ॥

अब मन्त्रोद्धार यथावत् रूप से कहा जाता है; यथा—१. ॐ महाभूत कुलसुन्दरी हुँ। २. ॐ विजयसुन्दरी ह्रीं अं। ३. ॐ विमलसुन्दरी आः। ४. ॐ सुन्दरी हुं हुं। ५. ॐ मनोहरी सुन्दरी धीः। ६. ॐ भूषणसुन्दरी क्लीं। ७. ॐ धवलसुन्दरी ह्रीं। ८. ॐ मधुमत्तसुन्दरी स्वाहा ह्रीं। इन सब मन्त्रों का कार्य आगे कहा जायेगा ॥ ३ ॥

एवमष्टौ महाभूतराज्ञो वज्रधरोदिताः।
एषां ग्रहणमात्रेण सर्वसिद्धिप्रदायकाः ॥ ४ ॥

इन आठ मन्त्रों को महाभूतों के राजा वज्रहस्त उन्मत्तभैरव ने कहा है। इन मन्त्रों के ग्रहण मात्र से समस्त कार्य सिद्ध हो जाते हैं ॥ ४ ॥

इष्टसिद्धि प्रयच्छामो भूतिनीसहिता वयम्।
इत्याहुर्यक्षगन्धर्वापराजितपुरःसराः ॥ ५ ॥

यक्ष, गन्धर्व, भैरव, अपराजित आदि सब ने कहा है कि हमलोग भूतिनियों के साथ साधक को वांछित सिद्धि प्रदान करेंगे ॥ ५ ॥

भैरव उवाच

यदि कालमतिक्रम्य यूयं स्थास्यथ निर्भयाः।
तदा सकुलगोत्रं वो घातयामि न संशयः ॥ ६ ॥

भैरव कहते हैं—यदि तुमलोग समय का अतिक्रमण करके निर्भय होना चाहो, तब मैं निःसंदिग्ध रूप से तुम्हारा नाश करूँगा ॥ ६ ॥

अथापराजितः प्राह भूतवृन्दसमन्वितः।
मुद्रामन्त्राभिधानेन सुसिद्धि क्रोधजापिने ॥
यदि नाहं प्रयच्छामि भवामि कुलनाशकः।
दारयिष्यथ मां मूर्ध्नि नरके पातयिष्यथ ॥ ७ ॥

तदनन्तर भूतगणों से घिरे हुए भूतनाथ अपराजित कहते हैं—यदि क्रोध-भैरवोपासक को हमलोग मुद्रा-मन्त्र आदि द्वारा सुसिद्धि न दें, तब हम कुलनाशक कहे जायेंगे और आप हमारा मस्तक विदीर्ण करके हमें नरक का भागी बनायें ॥ ७ ॥

अथ मुद्राविधिं वक्ष्ये भूतिनीमन्त्रसाधनम्।
वाममुष्टिं दृढं बद्ध्वा मध्यमान्तु प्रसारयेत्।
आवाह्य पूजनीमुद्राम् उत्तमाङ्गुलिसाधिनीम् ॥ ८ ॥

तदनन्तर भूतिनी मन्त्रसाधना कहते हैं। बाँये हाथ की मुट्ठी को दृढ़तापूर्वक बन्द करके मध्यमा उँगली को फैलाये। यह है पूजनी मुद्रा। इससे उँगलियों की उत्तमता सिद्ध होती है ॥ ८ ॥

अन्योऽन्यमुष्टिसंयुक्ता तर्जनीन्तु प्रसारयेत् ।
सिध्यते तत्क्षणादेव भूतिनी सत्यपालिनी ।। ९ ।।

दोनों मुट्ठियों को परस्पर मिलाकर दोनों की तर्जनी को फैलायें। इससे तत्क्षण भूतिनी सिद्ध हो जाती हैं ।। ९ ।।

वामहस्ते दृढां मुष्टिं कनिष्ठान्तु प्रसारयेत् ।
भूतिन्यार्कर्षिणीमुद्रा सान्निध्यार्कर्षिणी स्मृता ।। १० ।।

बाँये हाथ की मुट्ठी को दृढ़ता से बन्द करके कनिष्ठा को फैलाये। यह है आकर्षणी मुद्रा। यह देवसन्निधान को देने वाली है ।। १० ।।

प्रसार्य वामहस्तन्तु तर्जनीं कुटिलाकृतिम् ।
ज्येष्ठयाङ्गुलिना बद्धा भूतिनीवशकारिणी ।। ११ ।।

पहले बायें हाथ की समस्त उँगलियों को फैलाये, परन्तु कनिष्ठा को कुण्डलाकृति करे, उसे सबसे बड़ी उँगली द्वारा बद्ध करके रक्खे। इस मुद्रा से भूतिनी वशीभूत हो जाती है ।। ११ ।।

वाममुष्टिं दृढां कृत्वाऽनामिकान्तु प्रसारयेत् ।
भूतिन्यार्कर्षिणी मुद्रा सर्वविघ्नविघातिनी ।। १२ ।।

बायें हाथ की मुट्ठी बाँधकर उसकी अनामिका को फैलायें। इस भूतिनी आकर्षिणी मुद्रा से समस्त विघ्न नष्ट हो जाते हैं ।। १२ ।।

वामहस्ते दृढां मुष्टिं ज्येष्ठाङ्गुलीं प्रसारयेत् ।
सम्मुखीकरणी मुद्रा सर्वदुष्टभयङ्करी ।। १३ ।।

बायें हाथ की मुट्ठी को बाँधकर ज्येष्ठ (मध्यमा) उँगली को फैलायें। यह सम्मुखीकरणी मुद्रा सर्वदुष्टभय का विनाश करती है ।। १३ ।।

वामहस्ते दृढां मुष्टिं कनिष्ठान्तु प्रसारयेत् ।
भूतिनी नामिका मुद्रा शीघ्रानयनकारिणी ।। १४ ।।

बायें हाथ की मुट्ठी को दृढ़ता से बाँधकर कनिष्ठा को फैलायें। यह भूतिनी मुद्रा है। इससे देवता शीघ्रता से आते हैं ।। १४ ।।

यदि शीघ्रं न चायाति म्रियते शुष्यति ध्रुवम् ।
चक्षुः स्फुटति भूतिन्याः शिरः स्फुटति निश्चितम् ।
तथापि यदि नायाति भूतिनीकालमाक्रमेत् ।
क्रोधेनानेन चाकृष्य जपेदष्टसहस्रकम् ।। १५ ।।

यदि पूर्वोक्त मुद्राओं द्वारा भी देवता न आये तब भूतिनी का नेत्र तथा शिर फटने लगता है। तथापि यदि वह न आये तो व्यर्थ समय व्यतीत न करें।

तब क्रोधमन्त्र से आकर्षण करके १००८ बार उस मन्त्र का जप करें अर्थात् १००८ बार क्रोधमन्त्र जपे ॥ १५ ॥

आदिबीजं द्विधा चास्त्रं कूर्चं लज्जामतः परम् ।
अमुकभूतिनीकूर्च्चास्त्रद्विठसम्पुटितो मनुः ।
अक्ष्णि मूर्ध्नि स्फुटत्येव यदि नायाति सत्वरम् ।
शुष्यते म्रियते वापि नरके पतति ध्रुवम् ॥ १६ ॥

क्रोधमन्त्र — 'ॐ फट् फट् हुं ह्लीं अमुकभूतिनी हुं फट् स्वाहा'। इस मन्त्र का जप करने पर भी भूतिनी न आये, तब उस (भूतिनी) के चक्षु तथा मस्तक फट जाते हैं। शरीर सूख जाता है और प्राणनाश के बाद उसे नरक मिलता है। यह ध्रुव है ॥ १६ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भूतिनीसिद्धिसाधनम् ।
नदीसङ्गममासाद्य मण्डलं चन्दनात्मकम् ।
कृत्वा पुष्पैः समभ्यर्च्य गुग्गुलुना प्रधूपयेत् ।
जपेदष्टसहस्रन्तु सिद्धा स्यात् कुलसुन्दरी ॥ १७ ॥

अब भूतिनी सिद्धि का उपाय कहा जा रहा है। किसी नदी के संगम पर जाकर रक्तचन्दन द्वारा भूमि पर एक मण्डप बनाये। गन्धपुष्पादि द्वारा अर्चन के उपरान्त उसे गुग्गुल से धूपित करें। तदनन्तर ८००० मन्त्र का जप करने से कुलसुन्दरी सिद्ध होती है। सुन्दरी का मन्त्र इसी पटल के श्लोक संख्या ३ में कहा जा चुका है ॥ १७ ॥

ततः क्रोधमनुं स्मृत्वा सहस्रं प्रजपेन्निशि ।
आयाति निश्चितं दद्यादर्घ्यं जम्बूदकेन च ।
ततः कामयितव्या सा भार्या भवति निश्चितम् ।
त्यक्त्वा स्वर्णपलं याति प्रभाते च दिने दिने ।
मासाभ्यन्तर एवन्तु सिध्यते कुलसुन्दरी ॥ १८ ॥

तदनन्तर रात्रि में क्रोधमन्त्र का १००० जप करें। ऐसा करने पर कुलसुन्दरी निश्चित रूप से आती हैं। तदनन्तर जामुन के रस से अर्घ्य प्रदान करें। इससे प्रसन्न हुई कुलसुन्दरी साधक की भार्या बन जाती है। समस्त रात्रि पर्यन्त साधक के पास पत्नी के समान रहकर सुबह साधक को ८ तोला स्वर्ण देकर चली जाती है। इस साधना को १ माह तक करें ॥ १८ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा चन्दनेन च मण्डपम् ।
दधिभक्तिं निवेद्याथ जपेदष्टसहस्रकम् ।
यावत् सप्तदिनान्येव आयाति दिवसेऽष्टमे ।
चन्दनेन निवेद्यार्घं वदेत्तुष्टा वर वृणु ।

साधकेन तु वक्तव्यं राज्यं मे देहि सुन्दरि ! ।
राज्यं ददाति सा नित्यं वस्त्रालङ्कारभोजनम् ।
स्वयं यच्छति देवीयं तुष्टा विजयसुन्दरी ।। १९ ।।

नदियों के संगमस्थल पर जाकर रक्तचन्दन द्वारा भूमि पर मण्डल बनाये। वहाँ दही तथा अन्न द्वारा अर्चना करके ८००० मन्त्र जपे। ऐसा ७ दिन करें। ८वें दिन देवी आती हैं। चन्दन को घिसकर उसका अर्घ्य उन्हें प्रदान करें। तब देवी प्रसन्न होकर वर माँगने को कहती हैं। साधक कहे—'हे देवी ! हमें राज्य प्रदान करो'। उक्त विधि से सिद्ध हो जाने पर विजयसुन्दरी देवी अपने उपासक को स्वयं राज्य प्रदान करती हैं और प्रतिदिन वस्त्र, अलंकार आदि भी देती हैं ।। १९ ।।

वज्रपाणिगृहं प्राप्य शुभ्रचन्दनमण्डले ।
हयमारप्रसूनैश्च सम्पूज्य धूपयेत् ततः ।
गुग्गुलुना जपेदष्टसहस्रं सिद्धिमाप्नुयात् ।
सहस्रं हि जपेद्रात्रौ पुनरागच्छति ध्रुवम् ।
दत्त्वा पुष्पाणि वक्तव्यं स्वागतं हृष्टमानसः ।
तुष्टा भवति सा भार्या दिव्याम्बररसायनम् ।
धनं ददाति शत्रूणां करोति निधनं ध्रुवम् ।
त्रिदिवं पृष्ठमारोप्य नयतीष्टं प्रयच्छति ।
दशवर्षसहस्राणि सुन्दरी प्रीतिसाधकम् ।। २० ।।

किसी क्रोधभैरव के मन्दिर में जाकर श्वेतचन्दन से भूमि पर बनाये मण्डप में कनेर के पुष्पों द्वारा पूजा करें और गुग्गुलु से धूपित करें। १००८ मन्त्र जप द्वारा देवी को सिद्ध करें। पुनः रात्रि में १००० जप करने से देवी आती हैं। तब उन्हें पुष्पांजलि प्रदान करें और प्रसन्न मन से उनका स्वागत करे। इससे देवी सुप्रसन्न होकर साधक की पत्नी बन जाती हैं और उसे दिव्य वस्त्र-धनादि देती हैं और शत्रु का नाश करती हैं। साधक को अपनी पीठ पर रखकर स्वर्ग ले जाकर वांछित वस्तु भी देती हैं। उस साधक से देवी १०००० वर्षों तक प्रसन्न रहती हैं ।। २० ।।

गत्वा नदीतटे कृत्वा मण्डलं गन्धवारिणा ।
गन्धेन सितपुष्पेण अर्घ्यं गुग्गुलुना पुनः ।
धूपयित्वा जपेदष्टसहस्रं सिद्धिमाप्नुयात् ।
सहस्रं हि पुना रात्रौ जपेदागच्छति ध्रुवम् ।
दत्त्वा पुष्पोदकेनार्घ्यं वक्तव्या भगिनी भव ।

भूत्वा तु भगिनी नित्यमिष्टद्रव्याणि यच्छति ।
रसं रसायनं काम्यं स्वयं यच्छति सुन्दरी ॥ २१ ॥

नदी-तट पर गन्धोदक द्वारा एक मण्डप बनाये। उसमें श्वेत पुष्प तथा गन्ध द्वारा अर्घ्य प्रदान करके गुग्गुलु से धूपित करें। ८००० जप करने से सुन्दरी देवी सिद्ध हो जाती हैं। पुनः रात्रि में १००० जप करें। इससे देवी उपासक के समीप आ जाती हैं। उस समय उन्हें पुष्पमिश्रित जल से अर्घ्य प्रदान करें और कहे—'देवी ! तुम मेरी बहन बनो'। देवी तत्क्षण बहन बनकर साधक को विविध द्रव्य, नाना रस-रसायन तथा अभिलषित वस्तु स्वयं देती हैं ॥ २१ ॥

शून्यं देवालयं गत्वा बलिं दत्त्वा यथोचितम् ।
जपेदष्टसहस्रन्तु सिद्धाऽऽगच्छति सन्निधिम् ।
कामिता सा भवेद्भार्या राज्यं यच्छति वाञ्छितम् ।
स्वर्गं नयति सा तुष्टा पृष्ठमारोप्य दुर्लभम् ।
राजकन्याः समादाय प्रयच्छति दिने दिने ।
दीनाराणां सहस्रन्तु प्रददाति मनोहरा ।
पञ्चवर्षसहस्राणि भुक्त्वा भोगं महीतले ।
मृते राजकुले जन्म पुनर्भवति निश्चितम् ॥ २२ ॥

निर्जन देवालय में यथायोग्य विधि से बलि देकर तथा पूजन करके ८००० जप करने पर सुन्दरी देवी समीप में आती हैं और साधक की पत्नी होकर राज्य एवं वांछित वस्तु देती हैं। वे अपनी पीठ पर बैठाकर साधक को स्वर्ग ले जाती हैं और प्रतिदिन अनेक राजकन्याएँ लाकर देती है और वह हजार स्वर्णमुद्राएँ देती हैं। इस प्रकार साधक पृथ्वी पर ५००० वर्ष पर्यन्त नाना भोगों का भोग करके मरने के बाद निश्चय ही राजकुल में जन्म लेता है ॥ २२ ॥

नीचगासङ्गमं प्राप्य मण्डलं परिकल्पयेत् ।
दत्त्वामिषोपहारञ्च करवीरप्रसूनकम् ।
धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
सिद्धा भवति कामिन्याः पुनः पूजां समाचरेत् ।
प्रज्वाल्य घृतदीपञ्च सहस्रं प्रजपेन्मनुम् ।
नूपुरस्य तु शब्देन देवी भुवनसुन्दरी ।
सहस्रार्द्धपरीवारैर्युक्ता गच्छति सन्निधिम् ।
कामिता तुष्टिभावेन भार्या भवति नान्यथा ।
भार्यात्वे च परीहारे शत्रुनाशो भवेद् ध्रुवम् ।

प्रत्यहं पृष्ठमारोप्य सूर्यलोकं नयत्यपि ।
पञ्चवर्षसहस्राणि भुक्त्वा भोगमनुत्तमम् ।
मृते राजकुले जन्म भवतीति न संशयः ॥ २३ ॥

नदियों के संगम पर जाकर भूमि पर मण्डल का निर्माण करें और मांस के उपहार तथा कनेर के पुष्पों से देवी का पूजन करें । उसे गुग्गुलु द्वारा धूपित भी करें । आठ हजार जप करने से देवी त्रिपुरसुन्दरी सिद्ध हो जाती हैं । इस प्रकार मन्त्रसिद्धि होने पर पुनः रात्रि में विविध उपहार द्वारा देवी का पूजन करें और घी का दीपक जलाकर एक हजार बार जप करें । ऐसा करने से भूषणसुन्दरी देवी अपने सहस्रार्ध परिवार के साथ साधक के पास नूपुर-ध्वनि करती हुई आती हैं । वह साधक की भार्या होकर रहती हैं और साधक को पीठ पर बैठाकर सूर्यलोक में ले जाती हैं । इस प्रकार से ५००० वर्ष पर्यन्त नाना प्रकार का भोग करके मरण के उपरान्त उसका जन्म राजा के कुल में होता है, इसमें सन्देह नहीं है ॥ २३ ॥

कुङ्कुमेन विधायाथ मण्डलं नीचगातटे ।
धूपञ्चात्राऽगुरुं दत्त्वा बलिं दद्याद् यथोचितम् ।
जपेदष्टसहस्रन्तु पुना रात्रावतन्द्रितः ।
प्राग्वत् पूजां विधायाथ सहस्रं प्रजपेन्मनुम् ।
आगता चेत्ततो दद्यादर्घं चन्दनवारिणा ।
हृष्टा ब्रूते वरं ब्रूहि स्वयं धवलसुन्दरी ।
साधकेन तु वक्तव्यं मातृवत् परिपालय ।
सहस्रार्धपरीवारं वस्त्रालङ्कारभोजनैः ।
नित्यं तोषयते देवी वाञ्छितार्थं प्रयच्छति ।
दशवर्षसहस्राणि भोगान् भुक्त्वा मृतो भवेत् ।
पुनर्विप्रकुले जन्म भवतीति न संशयः ॥ २४ ॥

किसी नदी-तीर पर जाकर कुंकुम द्वारा मण्डल बनाये । तदनन्तर अगुरु द्वारा धूप दे और बलि देकर ८००० जप करें । पुनः रात्रि में पूर्ववत् पूजन तथा बलि देने के अनन्तर १००० जप करें । देवी के आने पर चन्दनादि द्वारा अर्घ्य प्रदान करें । देवी धवलसुन्दरी के सन्तुष्ट हो जाने पर वे वर माँगने को कहती हैं । तब साधक कहे—'हे देवी ! माता के समान मेरा परिपालन करो' । इस प्रकार सिद्ध होने पर वह ५०० परिवार के साथ साधक को प्रतिदिन वस्त्र, अलंकार, भोजन, द्रव्य तथा वांछित धन प्रदान करके सन्तुष्ट करती हैं । ऐसे १०००० वर्ष पर्यन्त भोग करके साधक मरने के पश्चात् ब्राह्मण-कुल में जन्म लेता है ॥ २४ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा कृत्वा पूजामनुत्तमाम् ।
प्रज्वाल्य घृतदीपञ्च बलिं दत्त्वा प्रयत्नतः ।
पूजयेत् सकलां रात्रिमेकचित्तो भयोज्झितः ।
ततोऽर्धरात्रिसमये समागच्छति सन्निधिम् ।
कर्त्तव्यं किं मया धीर वद त्वं निजवाञ्छितम् ।
साधकेन च वक्तव्यं राज्यं मे देहि सुन्दरि ! ।
राज्यं यच्छति सा तुष्टा दीनाराणां सहस्रकम् ।
दिने दिनेऽपि वा लक्षं ददाति म्रियते यदि ।
सार्वभौमकुले जन्म वज्रपाणिप्रसादतः ।
एता अष्टौ महाभूतराज्ञोऽभीष्टफलप्रदाः ।
क्रोधाधिपभयात् सिद्धिं प्रयच्छन्ति कलौ युगे ॥ २५ ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रे सुन्दरीसाधनं नाम तृतीयं पटलम् ॥ ३ ॥

नदीसंगम के पास बैठकर उत्तमरूपेण पूजन करें। घी का दीपक जलाकर यत्नपूर्वक रात्रिपर्यन्त निर्भय होकर जप करें। रात्रि का अन्त होने पर देवी आकर साधक की इच्छा पूछती हैं, तब साधक कहे—'हे सुन्दरी ! मुझे राज्य प्रदान करो'। देवी प्रसन्न होकर राज्य तथा सहस्र स्वर्णमुद्रा तत्काल देती हैं। इससे साधक क्रोधभैरव की कृपा से समुद्र-पर्यन्त पृथ्वी का अधिपति होकर मरने के बाद राजकुल में जन्म लेता है। पूर्वकथित आठ प्रकार के महाभूतगण क्रोधभैरव के भय से साधक को सभी प्रकार के अभीष्ट फल देते हैं ॥ २५ ॥

भूतडामर महातन्त्र का तृतीय पटल समाप्त ।

चतुर्थं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

भगवन् ! देवदेवेश ! सुरासुरभयप्रद ! ।
श्मशानवासिनीं ब्रूहि यदि तुष्टोऽसि भैरव ! ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती है—हे देवदेवेश्वर ! आप सुर-असुर को भयग्रस्त करते हैं। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तब श्मशानवासिनी को सिद्ध करने के मन्त्र आदि का उपदेश करें ॥ १ ॥

भैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पितृभूवासिनीमनुम् ।
दीनानामुपकाराय नत्वाग्रे क्रोधभूपतिम् ॥ २ ॥

भैरव कहते हैं—मैं क्रोधभूपति को नमस्कार करके दीनों के उपकारार्थ श्मशानवासिनी का मन्त्र कहता हूँ ॥ २ ॥

विष प्राथमिकं कालबीजं द्विगुणमीरितम् ।
प्रालेयमथ भूतेशबीजं फट् फट् द्वयं पुनः ।
ततः सर्वभूतिनीनां पदं भगवतः पदम् ।
वज्रधरस्य समयमनुपालय संलिखेत् ।
हनवधाक्रमपदं समुद्धृत्य द्वयं द्वयम् ।
भो भो रात्रावितिपदात् श्मशानवासिनीपदम् ।
आगच्छ शीघ्रं कूर्चास्त्रं भूतिन्यावाहक्रन्मनुः ॥ ३ ॥

'ॐ ह्रीं हुं हुं ॐ ह्रीं फट् फट् सर्वभूतिनीनां भगवतो वज्रधरस्य समयमनुपालय हन हन वध वध आक्रम आक्रम भो भो रात्रौ श्मशानवासिनी आगच्छ शीघ्रं हुं फट्'। यह भूतिनी का आवाहन मन्त्र है ॥ ३ ॥

तारं ज्वलयुगं पश्चाद् विधूनैव चलद्वयम् ।
चालयप्रविशौ प्राग्वज्ज्वलतिष्ठद्वयं द्वयम् ।
समयमनुपालय पदं भो भो रात्रावुदीरयेत् ।
श्मशानवासिनी कालद्वयादस्त्रद्वयं द्विठः ।
असौ श्मशानवासिन्या मनुः समयसंज्ञकः ।
श्मशानवासिनीमन्त्रमतो वक्ष्ये यथाक्रमम् ॥ ४ ॥

'ॐ ज्वल ज्वल विधून चल चल चालय चालय प्रविश प्रविश ज्वल ज्वल

तिष्ठ तिष्ठ समयमनुपालय भो भो रात्रौ श्मशानवासिनि हुं हुं फट् फट् स्वाहा'। यह श्मशानवासिनी का समयसंज्ञक मन्त्र कहा गया है ॥ ४ ॥

पञ्चरश्मि समुद्धृत्य चलद्वयं पठद्वयम्।
महापदमतो लेख्यं भूतिनीं साधयेति च।
कुले प्रिये स्फुरयुगं तद्वद्विसुर कट्द्वयम्।
ततः प्रतिहतपदं जयविजययुग्मकम्।
तर्जयुग्मं हुञ्चयुग्मं फट्युग्मञ्च प्रथद्वयम्।
विषमग्निप्रियान्तेयं प्रोक्ता दंष्ट्राकरालिनी ॥ ५ ॥

'ॐ चल चल पठ पठ महाभूतिनीं साधय कुले प्रिये स्फुर स्फुर विसुर विसुर कट् कट् प्रतिहत जय जय विजय विजय तर्ज तर्ज हुं हुं फट् फट् प्रथ प्रथ ॐ स्वाहा'। यह सर्वसिद्धिदायक मन्त्र है ॥ ५ ॥

प्रालेयं प्रथमं गृह्य ततो घोरमुखीपदम्।
श्मशानवासिनीशब्दात् साधकानुपदात्ततः।
कुलेऽप्रतिहतपदं सिद्धिदायिक इत्यपि।
अनादिसृष्टित्रितयं नतिज्वलनवल्लभा।
इदं घोरमुखीमन्त्रमुक्तमिष्टार्थसाधकम् ॥ ६ ॥

'ॐ घोरमुखी श्मशानवासिनी साधकानुकूलेऽप्रतिहतसिद्धिदायिके ॐ ह्लीं ह्लीं नमः स्वाहा'। यह मन्त्र सर्वसिद्धि देता है तथा घोरमुखी मन्त्र-साधना में इष्टार्थ की प्राप्ति कराता है ॥ ६ ॥

ब्रह्मसूत्रं समुद्धृत्य तंदन्ते तर्जनीमुखि।
विषद्वयं समाभाष्य ततो विश्वचिताचिते।
सर्वशत्रुपदाद्गृह्य भयङ्करिपदस्ततः।
हनद्वयं दहयुगं पच मारय द्वयं द्वयम्।
ततो ममाकारपदं गृह्य मृत्युक्षयङ्करि!।
सर्वनागपदाद् यक्षभक्ष अट्टाट्टहासिनि।
सर्वभूतेश्वरी कूर्चंहताद्विषशिखिप्रिया ॥ ७ ॥

'ॐ तर्जनीमुखि ॐ ॐ विश्वचिताचिते सर्वशत्रुभयङ्करि हन हन दह दह पच पच मारय मारय ममाकारस्य मृत्युक्षयङ्करि सर्वनाग पदाद् यक्षभक्ष अट्टाट्टहासिनि सर्वभूतेश्वरि हुं हत ॐ स्वाहा' ॥ ७ ॥

वेदादितोऽग्नेश्च प्रियान्ता तज्जयजयोन्मुखी।
अनादिबीजमाभाष्य ततः कमललोचनि!।
मनुष्यवत्सले देवि! सर्वदुःखविनाशिनि।
साधकानुपदात् कूले प्रिये! जयपदद्वयम्।

द्वे गृहीत्वा कालबीजे मन्त्रं ग्राह्यं पदं नतिः ।
वह्निप्रियान्तयुक्तेयं देवी कमललोचनी ॥ ८ ॥

'ॐ कमललोचनि मनुष्यवत्सले सर्वदुःखविनाशिनि साधकानुकूले प्रिये जय जय हुं हुं फट् नमः स्वाहा'। यह का कमललोचनी मन्त्र उपासकों के लिए सर्वसिद्धिप्रदायक है ॥ ८ ॥

त्रिषाद्या विकटमुखि ततो दंष्ट्राकरालिनि ! ।
ज्वलद्द्वयपदाद्गृह्य सर्वयक्षभयङ्करि ! ।
धीरधीरपदं गृह्य गच्छ गच्छ पदं ततः ।
भो भोः साधककिमाज्ञापयसि हुं पदक्रमात् ।
शिवोऽन्ताचेरिता देवि विकटास्येष्टसिद्धिदा ॥ ९ ॥

'ॐ विकटमुखि दंष्ट्राकरालिनि ज्वल ज्वल सर्वयक्षभयङ्करि धीर धीर गच्छ गच्छ भो भोः साधक किमाज्ञापयसि हुं'। यह विकटामन्त्र इष्टसिद्धि देता है ॥ ९ ॥

विषं ध्रुविपदं कर्णपिशाचिनि ततः परम् ।
कटुद्वयं धूनयुगं महासुरपदं ततः ।
पूजिते भिन्दयुगलं महाकर्णपिशाचिनि ।
भो भो हुं साधकपदं किङ्करोम्युच्चरेत् ततः ।
लज्जाबीजं विसर्गान्तं कालादस्त्रयुगं लिखेत् ।
वह्निप्रियान्तमित्युक्तमुद्धरेन्मनुविग्रहम् ॥ १० ॥

'ॐ ध्रुवि कर्णपिशाचिनि कटु कटु धून धून महासुरपूजिते भिन्द भिन्द महाकर्णपिशाचिनि भो भो साधक किङ्करोमि ह्लीं अः हुं हुं फट् फट् स्वाहा'। यह कर्णपिशाचिनी मन्त्र सर्वज्ञानप्रद है ॥ १० ॥

विषं ध्रुविपदं लेख्यं सरुकटुद्वयं द्वयम् ।
स्तम्भयद्वयमाभाष्य चालयद्वयमीरयेत् ।
मोहय द्वयतो विद्युत्करालीपदमुद्धरेत् ।
अतिभूतचरस्याग्रे विलिखेत् सिद्धिदायिके ।
हु फें भयङ्करी बीजमन्त्राग्निदयितान्वितम् ।
इति विद्युत्करात्युक्ता वाञ्छितार्थप्रदायिनी ॥ ११ ॥

'ॐ ध्रुवि ध्रुवि सरु सरु कटु कटु स्तम्भय स्तम्भय चालय चालय मोहय मोहय विद्युत्करालिनि अतिभूतचरस्य सिद्धिदायिके हुं फें भयङ्करी फट् स्वाहा'। यह विद्युत्कराली मन्त्र वांछित फल देने वाला है ॥ ११ ॥

विषं सौम्यमुखीं गृह्याकर्षयद्वयमुद्धरेत् ।

ततः सर्वभूतिनीनां जयद्वयमुदीरयेत् ।
भो भोस्ततः साधकेति पदं तिष्ठद्वयं ततः ।
समयमन्वितिपदं पालयेति पदं ततः ।
साधु साधु ततो भो भोः किमाज्ञापयसि द्वयम् ।
किलिद्वयाग्निजायान्तः प्रोक्तः सौम्यमुखीमनुः ॥ १२ ॥

'ॐ सौम्यमुखि आकर्षय आकर्षय सर्वभूतिनीनां जय जय भो भोः साधक तिष्ठ तिष्ठ समयमनुपालय साधु साधु भो भोः किमाज्ञापयसि किलि किलि स्वाहा'। यह सौम्यमुखी मन्त्र साधकों के लिए फलदायक है ॥ १२ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि पितृभूमिनिवासिनीम् ।
कर्णपैशाचिकीं मुद्रां यया सिद्धिरनुत्तमा ॥ १३ ॥

अब मैं श्मशानवासिनी कर्णपिशाचिनी देवी का वर्णन करता हूँ। उनकी निम्नलिखित मुद्रा द्वारा उत्तम सिद्धि प्राप्त होती है ॥ १३ ॥

कृत्वाऽन्योन्यस्ततो मुष्टिं कनिष्ठे वेष्टयेदुभे ।
ततः प्रसार्य तर्जन्यौ वक्त्रदेशे नियोजयेत् ।
दंष्ट्राकरालिनी मुद्रा कथिता सा महाप्रभा ॥ १४ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठी को बन्द करके दोनों कनिष्ठा उँगलियों को परस्पर एक-दूसरे में फँसायें। तदनन्तर तर्जनी को फैलाकर उसे मुख से लगाये। यह दंष्ट्राकरालिनी मुद्रा है ॥ १४ ॥

कृत्वा वामकरे मुष्टिं मध्यमान्तु प्रसारयेत् ।
तर्जन्यौ वा प्रसार्योभे मुद्रा घोरमुखी मता ॥ १५ ॥

बायें हाथ की मुट्ठी को बन्द करे। मध्यमा-तर्जनी को फैलाये। यह है घोरमुखी मुद्रा ॥ १५ ॥

बद्ध्वान्योऽन्यं ततो मुष्टिं कनिष्ठे द्वे च वेष्टयेत् ।
ततः प्रसार्य तर्जन्यौ वक्त्रदेशे निवेशयेत् ।
कथिता तर्जनीमुद्रा सर्वसिद्धिप्रदायिनी ॥ १६ ॥

दोनों मुट्ठियों को बन्द करके दोनों हाथों की कनिष्ठा अँगुलियों को एक दूसरे से सटाकर तथा दोनों तर्जनियों को फैलाते हुए उन्हें मुख से लगाये। यह है तर्जनी मुद्रा। इससे साधक समस्त सिद्धियों को प्राप्त करता है ॥ १६ ॥

अस्या एव च मुद्राया भग्ना कार्या तु मध्यमा ।
प्रसार्यानामिका मुद्रा प्रोक्ता कमललोचनी ॥ १७ ॥

उक्त तर्जनी मुद्रा में केवल दोनों मध्यमा उँगलियों को टेढ़ा करके रखे

और दोनों अनामिका उँगलियों को प्रसारित करें। यह है कमललोचनी मुद्रा ॥ १७ ॥

अस्या एव तु मुद्राया प्रवेश्याऽनामिका पुनः ।
कनिष्ठान्तु प्रसार्यासौ विकटास्या प्रकीर्त्तिता ॥ १८ ॥

कमललोचनी मुद्रा में अनामिकाओं को मुट्ठी में से फैलायें और दोनों कनिष्ठाओं को प्रसारित करें। यह है विकटास्या मुद्रा ॥ १८ ॥

दक्षपाणिकृता मुष्टिस्तर्जनीन्तु प्रसारयेत् ।
ख्यातैषाऽरुन्धती मुद्रा सर्वाभीष्टप्रदायिनी ॥ १९ ॥

दाहिने हाथ की मुट्ठी बाँधकर तर्जनी को फैलाये। यह है अरुन्धती मुद्रा, जिससे सभी वांछित फल प्राप्त होते हैं ॥ १९ ॥

अस्या एव तु मुद्रायास्तर्जन्याकृष्य मध्यमाम् ।
प्रसार्य दर्शयेदेषा मुद्रा विद्युत्करालिनी ॥ २० ॥

अरुन्धती मुद्रा में यदि तर्जनी से मध्यमा को खींचा जाये और फैलाया जाये, तब वह विद्युत्करालिनी मुद्रा हो जाती है ॥ २० ॥

दक्षमुष्टिं विधायाथ कनिष्ठान्तु प्रसारयेत् ।
प्रोक्ता सौम्यमुखी मुद्रा वाञ्छितार्थफलप्रदा ॥ २१ ॥

दाहिनी मुट्ठी बाँधकर कनिष्ठा उँगली को फैलाने से सौम्यमुखी मुद्रा बनती है। इससे साधक को वांछित फल प्राप्त होता है ॥ २१ ॥

अथासां साधनं वक्ष्ये दरिद्राणां हिताय च ।
कुर्वीरन् चेटिकाकर्म देव्योऽमूः साधकस्य च ॥ २२ ॥

इसके पहले जितने मन्त्र कहे गये हैं, अब उनका प्रयोग-विधान कहा जाता है। इस प्रकार से साधना करने से देवीगण साधक का दासत्व स्वीकार करती हैं ॥ २२ ॥

गत्वा श्मशानं प्रजपेन्मनुमष्टसहस्रकम् ।
सर्वेषामेव मन्त्राणां पूर्वमेषा पुरस्क्रिया ॥
पितृभूमौ समास्थाय दधिक्षौद्रघृतान्वितम् ।
हुनेदष्टसहस्रन्तु खादिरं समिधं सुधीः ॥
सिद्धे होमे समागत्य पितृभूवासिनी वदेत् ।
किं करोमि वद त्वं मे सन्तुष्टा साधकं प्रति ॥
साधकेनापि वक्तव्यं किङ्करी चेटिका भव ।
यच्छतीह दीनारञ्च क्षेत्रकर्म करोति च ॥

मत्स्यमांसं बलिं क्षेत्रवाटिकायां प्रदापयेत् ।
यत्रैकविंशरात्रिश्च चेटीकर्म करोति च ॥ २३ ॥

श्मशान में जाकर उन देवता का ८००० मन्त्र जपे । सब प्रकार की मन्त्र-सिद्धि में यह करना चाहिए । फिर वहाँ दही, घी, शहद के साथ खैर की लकड़ी से ८००० हवन करें । इसका समापन होने पर श्मशानवासिनी देवी साधक के समक्ष आकर पूछती हैं कि क्या कार्य है ? मैं तुमसे सन्तुष्ट हूँ' । इस सिद्धि के अनन्तर देवी साधक को सोने की मुद्रा देकर उसका क्षेत्रकर्म करती हैं । तब साधक मत्स्य-मांसादि बलि प्रदान करें । २१ दिन ऐसी साधना करने पर देवी गुप्त रूप से साधक का क्षेत्रकर्म करती हैं ॥ २३ ॥

अथवा प्रजपेद्रात्रौ श्मशानेऽष्टसहस्रकम् ।
शतघ्नदिक्सहायाढ्या भूतिन्याऽऽयाति वक्ति च ॥
किं करोमीति तच्छ्रुत्वा साधको भाषते पुनः ।
किङ्करी भव दासी त्वं गृहकर्म कुरुष्व मे ॥ २४ ॥

अथवा रात्रि के समय श्मशान में जाकर ८००० (आठ हजार) जप करें । इससे भूतिनी एक हजार परिजनों के साथ आकर साधक से कहती है—'मैं तुम्हारा क्या कार्य करूँ ? साधक कहे कि 'तुम मेरी किंकरी बनकर गृहकार्य करो' ॥ २४ ॥

पितृभूमौ तु यामिन्यां जपेदष्टसहस्रकम् ।
शतघ्नदिक्सहायाढ्या भूतिन्यायातिसन्निधिम् ॥
मत्स्यमांसौदनबलिं गृह्य हृष्टा प्रयच्छति ।
वासोयुग्ममलङ्कारं दीनारं प्रतिवासरम् ॥
सहस्रयोजनाद्दिव्यां नारीमानीय यच्छति ।
सुगुप्तं चेटिकाकर्म यावज्जीवं करोति च ॥ २५ ॥

इति भूतडामरमहातन्त्रे पिशाचिनीचेटिकासाधनं नाम चतुर्थं पटलम् ।

रात्रिकाल में श्मशान में बैठकर ८००० जप करें । इस प्रकार के साधन द्वारा भूतिनी अपने एक हजार परिवार-जनों के साथ आकर साधक द्वारा मत्स्य-मांसादि उपहार एवं अन्नभोग अर्पित किये जाने पर सन्तुष्ट होती हैं और साधक को प्रतिदिन वस्त्रयुगल तथा स्वर्णमुद्रा प्रदान करती हैं । सहस्र योजन दूर की भी दिव्या कामिनी को लाकर साधक को देती हैं । यह कामिनी जीवनपर्यन्त साधक का दासीकर्म करती है ॥ २५ ॥

भूतडामर महातन्त्र का चतुर्थ पटल समाप्त ।

पञ्चमं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

भगवन् ! सर्वभूतेश ! प्रमथाद्यैर्नमस्कृत ! ।
यदि तुष्टोऽसि देवेश ! चण्डकात्यायिनीं वद ।।
चण्डकात्यायनी रौद्री भूतिनी या प्रकीर्तिता ।
मनुं तस्याः प्रवक्ष्यामि नत्वा क्रोधाधिपं पुनः ।।
बीजं हालाहलं कूर्चनतिमस्त्रद्वयं शिवः ।
सुरकात्यायनीमन्त्रमीरितश्चातिदुर्लभम् ।। १ ।।

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—हे सर्वभूतेश्वर ! प्रथमगण आपको सदा नमस्कार करते हैं। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तब मुझे चण्डकात्यायनी मन्त्र का उपदेश करें ।। १ ।।

विषं कालं वदेद्बीजं ज्वालान्तं कूर्चसंज्ञितम् ।
अस्त्राऽन्तोऽयं मया प्रोक्तो महाकात्यायनीमनुः ।। २ ।।

उन्मत्तभैरव कहते हैं—चण्डकात्यायनी, रौद्री, भूतिनी प्रभृति जो देवता कहे गये हैं, मैं क्रोधभैरव को प्रणाम करके उन देवताओं का मन्त्र कहता हूँ ।। २ ।।

विषाद्रौद्रयुगं कालयुग्मं हालाहलस्ततः ।
चामुण्डालिङ्गितं व्योमद्वयं मन्त्रद्वयं शिवः ।
रौद्रकात्यायनी प्रोक्ता सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।। ३ ।।

कात्यायनी मन्त्र—"ॐ हुं नमो नमः हौं" ।

महाकात्यायनी मन्त्र—"ॐ हुं ज्वाला हुं फट्" । यह मन्त्र अति दुर्लभ है, जिसे तुमको बतला रहा हूँ ।

रौद्रकात्यायनी मन्त्र—"ॐ हौं हौं हुं हुं ॐ इं ल्व इं फट् फट् स्वाहा" । यह रौद्रकात्यायनी मन्त्र समस्त सिद्धि देने वाला है ।

आदिबीजं समुद्धृत्य ततो रुद्रभयङ्करि ।
अट्टाट्टहासिनि साधकप्रिये पदमुद्धरेत् ।।
महाविचित्ररूपकरि सुवर्णहस्ते ततः ।
यमनिकृन्तनि पदं सर्वदुःखपदन्ततः ।।
प्रशमनि पदमुच्चार्य त्रिविधं हुं चतुष्टयम् ।
ततः शीघ्रञ्च सिद्धिं मे प्रयच्छेति पदं ततः ।।

रौद्रबीजं विसर्गाढ्यं ततश्च वह्निसुन्दरी ।
चण्डकात्यायनी प्रोक्ता महाभूतेश्वरीमनुः ।
प्रोक्ताभीष्टप्रदा लोके जम्बूद्वीपे कलौ युगे ।। ४ ।।

'ॐ रुद्रभयङ्करि अट्टहासिनि साधकप्रिये महाविचित्ररूपकरि सुवर्णहस्ते यमनिकृन्तनि सर्वदुःखप्रशमनि ॐ ॐ ॐ हुं हुं हुं हुं शीघ्रं सिद्धिं मे प्रयच्छ हौं अः स्वाहा'। यह है महाभूतेश्वरी चण्डकात्यायनी का मन्त्र। यह कलियुग में जम्बूद्वीप के निवासियों को समस्त सिद्धियाँ देता है ।। ४ ।।

हालाहलं समुद्धृत्य ततो यमनिकृन्तनि ।
अकालमृत्युनाशिनीति खड्गत्रिशूलहस्ते ।
ततः शीघ्रपदं प्रोच्य सिद्धिं मे देहि भोः पदम् ।।
साधकं समाज्ञापय बीजं प्राथमिकं ततः ।
द्विष्ठान्तोऽयं मया प्रोक्तो वज्रकात्यायनीमनुः ।। ५ ।।

'ॐ यमनिकृन्तनि अकालमृत्युनाशिनि खड्गत्रिशूलहस्ते शीघ्रं सिद्धिं मे देहि भोः साधकं समाज्ञापय ह्लीं स्वाहा'। यह वज्रकात्यायनी मन्त्र है ।। ५ ।।

पञ्चरश्मि समुद्धृत्य हेमकुण्डलिनीपदम् ।
धीरद्वयं ज्वलयुगं ततो दिव्यमहापदम् ।।
कुण्डलविभूषिते पदं वारणमथिनीति च ।
भगवन्नाज्ञापयसि च शिवोऽन्तमनुमुद्धरेत् ।
इति कुण्डलपूर्वश्च प्रोक्तः कात्यायनीमनुः ।। ६ ।।

'ॐ हेमकुण्डलिनि धीर धीर ज्वल ज्वल दिव्यमहाकुण्डलविभूषिते वारणमथिनि भगवन्नाज्ञापयसि स्वाहा'। यह कुण्डलकात्यायनी का समस्त सिद्धिप्रदायक मन्त्र है ।। ६ ।।

विषमुद्धृत्य द्विकुटीद्विठः कुट्टयुगं ततः ।
धीरयुग्मं ज्वलयुगं स्वाहा कुलमुखी ततः ।।
गच्छ वेताल उपरि अनिशम्पादतः पुनः ।
कुण्डलद्वयमतः पाशद्वयं भगवन् पदम् ।।
आज्ञापय ततो रौद्रं सविसर्गं समुद्धरेत् ।
वह्निप्रियान्तः कथितो जयकात्यायनीमनुः ।। ७ ।।

'ॐ कुटी कुटी स्वाहा कुट्ट कुट्ट धीर धीर ज्वल ज्वल स्वाहाशनिमुखि गच्छ वेताल उपरि अनिशं कुण्डल कुण्डल आं आं आं भगवन् आज्ञापय अः स्वाहा'। यह है जयकात्यायनी का मन्त्र ।। ७ ।।

विषमुद्धृत्यापि सुरतप्रिये दिव्यलोचनि ।
कामेश्वरि जगन्मोहिनि ततश्च सुभगे पदम् ।।

ततः काञ्चनमालेति भूषणीति पदं वदेत् ।
ततो नूपुरशब्देन प्रविशद्वयमुद्धरेत् ॥
ततः पुरद्वयं साधकप्रिये पदमुद्धरेत् ।
आदिबीजं विसर्गाढ्यं शिवोऽन्तो भूतिनीमनुः ॥ ८ ॥

'ॐ सुरतप्रिये दिव्यलोचनि कामेश्वरि जगन्मोहिनि सुभगे काञ्चनमाले भूषणि नूपुरशब्देन प्रविश प्रविश पुर पुर साधकप्रिये ॐ अः स्वाहा'। यह सर्वकार्यसिद्धिप्रद भूतिनी मन्त्र है ॥ ८ ॥

विषं मातृपदाद् भ्रातृमद्भगिनीपदं क्रमात् ।
ततः कटुद्वयं प्रोक्तं जययुग्मं समुद्धरेत् ॥
सर्वासुरपदात् प्रेतपूजिते समुदीरयेत् ।
हालाहलं व्योमवक्त्रं सविसर्गं समुद्धरेत् ।
वह्निजायान्त उक्तोऽसौ शुभकात्यायनीमनुः ॥ ९ ॥

'ॐ मातृ-भ्रातृ-मद्भगिनी कटु कटु जय जय सर्वासुरप्रेतपूजिते ॐ हुं अः स्वाहा'। यह शुभकात्यायनी मन्त्र है, जिससे शुभकात्यायनी सिद्ध होती हैं ॥९॥

इयं कात्यायनी विद्या स्मृता सिद्धिप्रदायिनी ।
अस्या मुद्राविधिं वक्ष्ये भूतिनीसिद्धिदायकम् ॥ १० ॥

यह कात्यायनी विद्या कही है, जिससे साधक के सभी कार्य सिद्ध होने लगते हैं। अब इस विद्या की मुद्राओं का वर्णन किया जा रहा है, जिससे भूतिनी सिद्ध होती है ॥ १० ॥

मुष्टिमन्योन्यमास्थायाङ्गुलीनावेष्ट्य तत्परम् ।
प्रसार्याकुञ्चयेत्तत्र तर्जनीं सिद्धिमाप्नुयात् ॥
देहे मन्त्रे च सिद्धे च मनावाकर्षकर्मणि ।
भूतिनीं कर्षयेत् क्रोधमन्त्रयोगसहस्रकम् ॥
जुहुयाद्वश्यतां याति भूतिनी नात्र संशयः ।
श्रद्धाभक्तियुतोऽनेन मन्त्रेणावाहयेदमुम् ।
सुरकात्यायनी मुद्रा ह्यसाध्यार्थप्रदायिनी ॥ ११ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठियों को परस्पर मिलाकर एक मुट्ठी की उँगलियों से दूसरी मुट्ठी की उँगलियों को लपेट कर दोनों तर्जनियों को तनिक प्रसारित करके पुनः सिकोड़े। इससे सिद्धि मिलती है। देहशोधन, मन्त्रसिद्धि तथा आकर्षण में यह मुद्रा विहित है। क्रोधभैरव मन्त्र का १००० जप करके इस मुद्रा के प्रदर्शन से भूतिनी आकर्षित होती है। तदनन्तर होम आदि से वह वशीभूत हो जाती है। अतः भक्तियुक्त होकर क्रोधभैरव मन्त्र द्वारा भूतिनी का

आकर्षण करें। इस सुरकात्यायनी मुद्रा से असाध्य कार्य भी साधित हो जाता है ।। ११ ।।

मुष्टिं विधाय चान्योन्यं कुञ्चयेत्तर्जनीद्वयम् ।
इयं कात्यायनी मुद्रा भूतिनी सर्वसिद्धिदा ।। १२ ।।

दोनों हाथों की मुट्ठियों को मिलाकर बन्द करके दोनों तर्जनियों को सिकोड़ें रहना कात्यायनी मुद्रा है। जिससे भूतिनी समस्त सिद्धि प्रदान करती हैं ।। १२ ।।

अस्या एव तु मुद्राया मध्यमे मुखसङ्गते ।
कनिष्ठे द्वे निवेश्याथ निर्दिष्टा साधकप्रिया ।।
कुलभूतेश्वरीमुद्रा भूतिनी कुलवासिनी ।
अनया बद्धया शीघ्रं सिद्धिं यच्छति भूतिनी ।। १३ ।।

ऊपर कही गयी कात्यायनी मुद्रा में दोनों मध्यमांगुलियों के मुखों को आपस में मिलाकर दोनों कनिष्ठा अंगुलियों के साथ जोड़ें। यह मुद्रा साधक का हित करती है। इसका नाम है—कुलभूतेश्वरी मुद्रा। इस मुद्रा का निवास भूतिनी कुल में होता है। इस मुद्रा को बाँधने से भूतिनी शीघ्र ही सिद्धि प्रदान करती है ।। १३ ।।

मुष्टिद्वयं पृथक्कृत्वा तर्जनीश्च प्रसारयेत् ।
भद्रकात्यायनीमुद्रा वाञ्छितार्थप्रदायिनी ।। १४ ।।

दोनों हाथों की अलग-अलग मुट्ठियाँ बाँधकर दोनों तर्जनियों को फैलायें। इसका नाम 'भद्रकात्यायनी मुद्रा' है। यह साधक को मनोवांछित सिद्धि प्रदान करती है ।। १४ ।।

उभे मुष्टी विधायाथ वेष्टयेत्तर्जनीद्वयम् ।
कुलकात्यायनी मुद्रा भूतिनीरक्षणक्षमा ।।
ख्यातेयं चण्डपूर्वाया जयमुख्यार्थसाधिनी ।
द्राविणी कुलगोत्राणां सर्वभूतभयङ्करी ।। १५ ।।

एक साथ दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर दोनों की तर्जनी को एक दूसरे में लपेटे। यह है कुलकात्यायनी मुद्रा। इससे भूतिनी रक्षा करती हैं। चण्डकात्यायनी साधन में यह विहित है। यह मुद्रा समस्त शत्रुओं के कुल तथा गोत्र आदि का नाश तथा समस्त भूतों में भयोत्पादन करती है ।। १५ ।।

बद्ध्वा मुष्टिं ततोऽन्योऽन्यं कनिष्ठे वेष्टयेदुभे ।
प्रसार्योभे च तर्जन्यौ प्रकुर्यात् कुण्डलाकृती ।।
त्रैलोक्याकर्षिणी मुद्राऽजविष्णुरुद्रसाधिनी ।
किं पुनः सर्वभूतिन्याः सिद्धिरस्याः प्रसादतः ।

शुभकात्यायनी मुद्रा प्रोक्तेयं वज्रपाणिना ।
पूजिता गन्धपुष्पाद्यैर्मत्स्यमांसादिभिस्तथा ।
सिद्धिं यास्यन्ति भूतिन्यो दास्यतां यान्ति तत्क्षणात् ।। १६ ।।

दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर दोनों कनिष्ठा को एक-दूसरे में लपेटे। तदनन्तर दोनों तर्जनियों को प्रसारित करके कुण्डलाकृति बनाये । इस मुद्रा से तीनों लोक आकर्षित हो जाते हैं और ब्रह्मा, विष्णु, शिव तक सिद्ध हो जाते हैं । इस शुभकात्यायनी मुद्रा से भूतिनी-सिद्धि मिलती है । इसे देवराज वज्रपाणि ने कहा है । इस मुद्रा के प्रयोग से गन्ध-पुष्प-धूप-दीप-मछली तथा मांसादि उपहार से पूजन करने पर भूतिनी तत्क्षण दासत्व स्वीकार करके सिद्ध हो जाती है ।। १६ ।।

अथ वक्ष्ये दरिद्राणां हिताय क्रोधभूपतिम् ।
भूतकात्यायनीसिद्धिसाधनं परमाद्भुतम् ।
पितृभूमौ त्र्यहं स्थित्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
भूतकात्यायनी देवी शीघ्रमायाति सन्निधिम् ।
रक्तपूर्णकपालेन भक्तितोऽर्घ्यं प्रदापयेत् ।
किङ्करोमि वदेत्तुष्टा भव मातेति साधकः ।
राज्यं ददाति भोग्यञ्च सर्वाशाः पूरयत्यपि ।
पालयेन्मातृवत् पञ्चसहस्राब्दानि जीवति ।
मृते राजकुले जन्म नान्यथा क्रोधभाषितम् ।। १७ ।।

अब दरिद्रों के हितार्थ भूतकात्यायनी का परम अद्भुत सिद्धि-साधन कहा जा रहा है । श्मशान में रहकर ३ दिनों में ८००० जप करें । इस मुद्रा से त्रिभुवन तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव तक भी आकर्षित तथा सिद्ध हो जाते हैं । ऐसा करने पर देवी भूतकात्यायनी साधक के पास तुरन्त आती है । तदनन्तर साधक नरकपाल में रक्त भरकर उन्हें अर्घ्य प्रदान करें । ऐसा करने पर देवी साधक से कार्य पूछती हैं । तब साधक कहे—'देवी मुझे राज्य तथा भोग्य पदार्थ दो और मेरी इच्छाएँ पूर्ण करो' । इस साधन में सिद्धि मिलने पर देवी साधक का प्रतिपालन माँ के समान करती हैं और साधक की सत्ता ५००० वर्ष पर्यन्त रहती है । मरण के अनन्तर राजा के कुल में जन्म होता है, ऐसा क्रोधभूपति ने कहा है ।। १७ ।।

वज्रपाणिगृहं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
क्रोधराजं नमस्कृत्य दिवा कुर्यात् पुरस्क्रियाम् ।
ततो रात्रावेकलिङ्गं गत्वा सम्पूज्य भक्तितः ।
जपेदष्टसहस्रन्तु दिव्यपुष्पप्रदानतः ।
यच्छति प्रार्थितं देवी क्रोधभूपप्रसादतः ।। १८ ।।

वज्रपाणि के गृह (मन्दिर) में जाकर ८००० जप करें। दिन में प्रातः-काल का कृत्य करके रात्रि में शिवलिंग के पास जाकर क्रोधभैरव को प्रणाम करके ८००० जप करें एवं दिव्य पुष्प चढ़ाकर देवी से प्रार्थना करें। देवी क्रोधभूपति की कृपा से साधक को इच्छित वर प्रदान करती हैं ॥ १८ ॥

गत्वैकलिङ्गं यामिन्यां जपेदष्टसहस्रकम् ।
मञ्जीरशब्दितं तत्र श्रूयते प्रथमे दिने ।
दृश्यते च द्वितीयेऽह्नि द्रष्टव्या न च भाषते ।
वक्ति तृतीये सा वाचं किमिच्छसि वद स्फुटम् ।
भवोपस्थापिका यावज्जीवमित्याह साधकः ।
धनान्यानीय दिव्यां स्त्रीं कन्यां राजाङ्गनामपि ।
सुमेरुश्रृङ्गं नयति पृष्ठमारोप्य जीवति ।
सहस्रार्द्धञ्च वर्षाणां जन्म राजकुले पुनः ॥ १९ ॥

रात्रि में शिवलिंग के पास ८००० जप करें। पहले दिन नूपुर का शब्द सुनाई पड़ेगा। दूसरे दिन पुनः ८००० जप द्वारा देवी का दर्शन मात्र मिलेगा किन्तु उनसे बातचीत नहीं होगी। तीसरे दिन पुनः ८००० जप करने पर देवी उससे उसकी इच्छा पूछती हैं। तब साधक कहे—'तुम आजीवन मेरी परिचारिका बनकर रहो'। तब देवी साधक को धन, रत्न आदि एवं दिव्य स्त्री लाकर देती हैं और उसे पीठ पर बैठाकर सुमेरु पर्वत-शिखर पर ले जाती हैं। इस प्रकार से साधक ५०० वर्ष जीवित रहकर मरने पर राजकुल में जन्म लेता है ॥ १९ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
परिवारान्विता दिव्यं भूतिन्यायाति सन्निधिम् ।
आगता मन्त्रिता तु स्त्रीभावेनापि च कामिता ।
उपस्थायी भवेन्नित्यं दीनारद्वयदायिनी ।
गत्वोद्यानञ्च यामिन्यां जपेदष्टसहस्रकम् ।
दिनानि त्रीणि मञ्जीरशब्दस्य श्रवणं भवेत् ।
चतुर्थे दृश्यते देवी पञ्चमे दृश्यते पुनः ।
षष्ठसङ्ख्यादिने पञ्च दीनाराणि प्रयच्छति ।
सप्तमेऽह्नि शिवस्थाने विधाय मण्डलं शुभम् ।
धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
भूतिनी कन्यकागत्य गृहं स्वागतमाचरेत् ।
कामिता सा भवेद्भार्या प्रत्यहं रतिमाचरेत् ।
मुक्ताहारं परित्यज्य शयने याति नित्यशः ।

गृहीतव्यं न तद्धारं ग्रहणाभावतोऽपि च ।
पञ्चविंशतिदीनारं वस्त्रद्वयमनुत्तमम् ।
शत्रुं नाशयते शीघ्रं सहस्रायुः करोति च ।
मृते राजकुले जन्म साधकस्य न संशयः ।। २० ।।

किसी नदीसंगम पर जाकर ८००० जप करें । इससे परिवार के साथ देवी भूतिनी प्रकट होती हैं तथा स्त्रीभाव से साधक के पास आकर प्रतिदिन २ स्वर्णमुद्रा प्रदान करती हैं ।

किसी बाग में रात्रि में ८००० जप करें । ३ दिन जप करने से नूपुर शब्द श्रुतिगोचर होता है । चौथे दिन देवी का दर्शन होता है । पाँचवें दिन पुनः देवी का दर्शन मिलता है । छठे दिन देवी साधक को ५ स्वर्णमुद्रा देती हैं । सातवें दिन शिवलिंग के पास दिव्य आभूषण, धूप, दीप रखकर पुनः ८००० जप करे । इससे भूतिनी युवती के वेश में आकर साधक का मंगलाचरण करके साधक की भार्या बनकर रात्रि में प्रतिदिन उसके साथ विहार करती हैं । प्रातःकाल शय्या पर मोती का हार रखकर चली जाती हैं । उसके हार को नहीं लेना चाहिए, उसे न लेने पर वह साधक को प्रतिदिन २५ स्वर्णमुद्रा तथा २ वस्त्र देती हैं । साधक के समस्त शत्रु विनष्ट हो जाते हैं । ऐसा साधक १००० वर्ष जीवित रहता है । मरने पर राजकुल में जन्म लेता है ।। २० ।।

वज्रपाणिगृहं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
अन्यं देवालयं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
पुनारात्रौ जपेदष्टसहस्रं त्र्यहमेव च ।
शताष्टपरिवाराढ्या शीघ्रमायाति भूतिनी ।
सतोयचन्दनार्घ्येण तुष्टा यच्छति कामिकम् ।
परिवारशतान्यष्टवस्त्रालङ्कारभूषणैः ।
रसैः रसायनं पञ्चसहस्राब्दानि जीवति ।
मृते राजकुले जन्म भवेत् क्रोधप्रसादतः ।। २१ ।।

वज्रपाणि के मन्दिर में ८००० जप करे तथा अन्य देवालय में भी ८००० जप करे । तदनन्तर रात्रि में भी ८००० जप करे । ऐसे ३ दिन करने पर १०८ परिवार-जन के साथ भूतिनी आती हैं । साधक देवी को जल-चन्दनादि से अर्घ्य दे । देवी प्रसन्न हाकर वस्त्रालंकार से साधक की कामना पूरी करती हैं । साधक ५००० वर्ष पर्यन्त नाना प्रकार की रसकेलि के साथ सुखभोग करके मरणोपरान्त राजकुल में जन्म लेता है ।। २१ ।।

वज्रपाणिगृहं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
पूर्वसेवा भवेदस्याः पुरश्चरणपूर्विका ।

द्वितीयायां समारभ्य चतुर्थ्यान्तु समापयेत् ।
रात्रियोगे च पञ्चम्यां हुनेदष्टसहस्रकम् ।
करवीरभवैर्वह्नौ दधिक्षौद्रघृतान्वितैः ।
मालतीकुसुमैरष्टसहस्रैकं शतद्वयम् ।
सहस्रार्द्धसहायाढ्या महाभूतेश्वरी द्रुतम् ।
एति नूपुरशब्देन देयोऽर्घ्यः पुष्पवारिणा ।
जननी भगिनी भार्या स्वेच्छया कामिता भवेत् ।
माता स्वर्णाद्यलङ्कारं भोजनञ्च प्रयच्छति ।
भगिनी स्त्रियमानीय राज्यं यच्छति कामिकम् ।
दिव्यरूपा भवेद्भार्या सर्वाशाः पूरयत्यपि ।
ददाति भोजनञ्चायुर्दशवर्षसहस्रकम् ।
मृते राजकुले जन्म वज्रपाणिप्रसादतः ।
अयुतं हि जपेन्मन्त्रं पौर्णमास्यां पुरश्क्रिया ।
रात्रौ देवालयं गत्वा द्वारपूजां विधाय च ।
सकलां प्रजपेद्रात्रिं प्रातरागच्छति ध्रुवम् ।
दत्त्वार्घ्यं रुधिरेणैव तुष्टा भवति किङ्करी ।
प्रत्यहं भोजनं पञ्च दीनाराणि प्रयच्छति ।
शतमेकं पञ्चवर्षं जीवतीति न संशयः ॥ २२ ॥

वज्रपाणि के गृह में जाकर रात को ८००० जप करे तथा विधान-क्रम से पुरश्चरण करते हुए द्वितीया से प्रारम्भ करके चतुर्थी को जप का समापन करे। तदनन्तर पंचमी की रात्रि में दधि, मधु तथा घी मिश्रित कनेर के फूलों से १००८ तथा मालती को घी-मिश्रित करके १२०० होम करें। इस प्रकार करने से ८००० परिवार से आवृत महाभूतेश्वरी नूपुर-ध्वनि करते हुए आती हैं। उन्हें आते ही पुष्प तथा जल से अर्घ्य दे। अब साधक इच्छा से जननी, भगिनी किंवा भार्या—किसी एक सम्बन्ध द्वारा उन्हें सम्बोधित करे। माता बनाने पर वे अलंकार तथा नाना भोजनीय द्रव्य देती हैं। बहन बनाने पर वे उत्तमा स्त्री तथा भोग्य वस्तु देती हैं। भार्या बनाने पर वे साधक की समस्त इच्छा पूर्ण करके उत्तमोत्तम भोजनीय द्रव्य देती हैं। ऐसा साधक १०००० वर्ष जीवित रहता है और मरने पर राजकुल में जन्म लेता है। इतना करके पूर्णिमा को १०००० मन्त्र जपे। यही है मन्त्र-साधन का पूर्व-कृत्य। रात्रि में देवमन्दिर में द्वार की पूजा करे। समस्त रात्रि मन्त्र-जप करे। सुबह देवी आती हैं, तब उन्हें अर्घ्य दे। वे प्रसन्न होकर किंकरी बन जाती हैं। वे प्रतिदिन विविध भोजन तथा ५ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं। ऐसा साधक १०५ वर्ष जीवित रहता है॥ २२ ॥

विषबीजं ततो वर्म तोयघ्नञ्च समुद्धरेत् ।
मांसं मे पदमाभाष्य प्रयच्छानलवल्लभा ।
रात्रौ पितृभुवं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
पिशिताकर्षिणी देवी सिद्धा भवति निश्चितम् ।
नीत्वा मांसपलान्यष्टौ विलोक्य च चतुर्दिशम् ।
योषिद्ब्रह्मस्वरूपेण पुरस्तिष्ठति भूतिनी ।
ततो मांसं प्रदातव्यं भुक्त्वा मांसं प्रयच्छति ।
मांसादानेन म्रियते अक्षि-कुक्षिः स्फुटत्यपि ॥ २३ ॥

इति भूतडामरमहातन्त्रेऽष्टकात्यायनीसाधनं नाम पञ्चमं पटलम् ।

'ॐ तोयघ्नं मांसं मे प्रयच्छ स्वाहा' । रात्रि में श्मशान में यह मन्त्र ८००० बार जपे । इससे मांसाकर्षिणी भूतिनी सिद्ध हो जाती हैं । तदनन्तर ३२ तोला मांस हाथ में लेकर चारों ओर देखने पर भूतिनी देवी दीखने लगती हैं । तत्क्षण देवी को माँस दे । समस्त मांस न देने पर साधक की मृत्यु होती है या आँखें अथवा पेट फूट जाता है ॥ २३ ॥

भूतडामर महातन्त्र का पञ्चम पटल समाप्त ।

षष्ठं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

सुरासुरजगद्वन्द्य ! जगतामुपकारक ! ।
श्रीमहामण्डलं ब्रूहि सर्वसिद्धिप्रदायकम् ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—हे भैरव ! आप सुर एवं असुरों के तथा जगत् के पूजनीय एवं उपकारक हैं। अतः आप महासिद्धि प्रदान करने वाले श्रीमहामण्डल का वर्णन कीजिए।

उन्मत्तभैरव उवाच

विद्याधरोऽप्सरोयक्षप्रेतगन्धर्वकिन्नरैः ।
महोरगैः परिवृतो महादेवस्त्रिलोचनः ।
क्रोधं प्रदक्षिणीकृत्य नमस्कृत्य पुनः पुनः ।
पादौ शिरो विधायाथ भाषते क्रोधभूपतिम् ।
क्रोधीश ! त्वं महाभूतदुष्टग्रहविमर्दक ! ।
कटपूतनवेतालक्लेशविघ्नविघातक ! ।
प्रसीद देवदेवेश ! संसारार्णवतारक ! ।
पश्चिमे समये प्राप्ते जम्बूद्वीपे कलौ युगे ।
मर्त्यानामुपकारार्थं दुष्टदुर्जननिग्रहम् ।
भूतिनीयक्षिणीनागकन्यकासाधनं वद ।
बोधिसत्त्वो महादेवं साधु साध्वीति पूजयन् ।
महामण्डलमाख्यातं सुव्यक्तं सुरपादपम् ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—महादेव ने विद्याधर, अप्सरा, यक्ष, प्रेत, गन्धर्व, किन्नर तथा सर्पगण से घिरी अवस्था में क्रोधभूपति का पुनः-पुनः प्रणाम करके उनके पदद्वय को मस्तक पर धारण करते हुए उनकी प्रदक्षिणा करते हुए कहा—'हे क्रोधेश्वर ! आप महाभूत तथा दुष्ट ग्रह आदि के विनाशक हैं। देवाधिदेव हैं तथा संसार-समुद्र से पार कराने वाले हैं। अब इस कलियुग में मनुष्यों के उपकार हेतु दुष्टजन का शमन करने वाले, भूतिनी, यक्षिणी तथा नागकन्यादि का साधन कहिए'। क्रोधपति ने महादेव को साधुवाद देते हुए कहा ॥ १ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महामण्डलमुत्तमम् ।
चतुरस्रं चतुर्द्वारं चतुष्कोणविभूषितम् ।

दलैः षोडशभिर्युक्तं वप्रप्राकारशोभितम् ।
तत्र मध्ये न्यसेद्भीमं ततो ज्वालासमाकुलम् ।
साट्टहासं महारौद्रं भिन्नाञ्जनचयोपमम् ।
प्रत्यालीढं चतुर्बाहुं दक्षिणे वज्रधारिणम् ।
तर्जनीं वामहस्तेन तीक्ष्णदंष्ट्रां करालिनम् ।
कपालरत्नमुकुटं त्रैलोक्यस्यारिनाशनम् ।
आदित्यकोटिसङ्काशमष्टनागविभूषितम् ।
अपराजितपदाक्रान्तं मुद्राबन्धेन तिष्ठति ।
अनामिकाद्वयं वेष्ट्य आकुञ्च्य तर्जनीद्वयम् ।
कनिष्ठां मध्यमाञ्चैव ज्येष्ठाङ्गुष्ठेन च क्रमात् ।
एवं मुद्राधरः श्रीमान् त्रैलोक्यसाध्यसाधकः ।
उमापतिं लिखेत् क्रोधपूर्वे विष्णुश्च दक्षिणे ।
रक्षोदेवं पश्चिमे तु कार्त्तिकेयं तथोत्तरे ।
ईशाने च गणाधीशमादित्यं वह्निसंस्थितम् ।
नैर्ऋते तु लिखेद्राहुं वायुकोणे नटेश्वरम् ।
चन्द्रं सम्पूजयेद्वामे क्रोधराजस्य भूपतेः ।
प्रभादेवीं सुवर्णाभां सर्वालङ्कारभूषिताम् ।
ईषद्धसितवदनां क्रोधवामे सदा लिखेत् ।
क्रोधाग्रे पुष्पहस्ताञ्च श्रीदेवीं परिभावयेत् ।
सालङ्कारां धूपहस्तां क्रोधदक्षे तिलोत्तमाम् ।
क्रोधस्य पृष्ठभागे च दीपहस्तामलङ्कृताम् ।
दिव्यरूपां शशीं देवीं द्विजराजमुखीं तथा ।
आग्नेय्याञ्च न्यसेद्भद्रां दिव्यकुण्डलमण्डिताम् ।
गृहीतगन्धहस्ताञ्च रत्नभूषणभूषिताम् ।
विन्यसेद्रक्षःकोष्ठायां वीणायुक्तां सरस्वतीम् ।
वायव्यां यक्षिणीं रत्नमालाढ्यां सुरसुन्दरीम् ।
ईशाने च विशालाक्षीं सर्वालङ्कारभूषिताम् ।
रूपयौवनसम्पन्नां स्वर्णवर्णां समालिखेत् ।
इन्द्रो वह्निर्यमो रक्षो वरुणो वायुरेव च ।
कुबेरश्च शशीशानौ बाह्यप्राचादिमण्डले ॥ २ ॥

मैं महामण्डल का वर्णन करता हूँ, सुनो। चतुरस्र, चतुर्द्वार, चतुष्कोण, षोडशदल पद्म तथा वप्रप्राकारादि-शोभित मण्डल बनाकर उसमें भीममूर्त्ति का विन्यास करो। भीममूर्त्ति इस प्रकार है—अतिशय तेजस्वी, अट्टहासयुक्त,

महाभयंकर, काजल के समान देहकान्ति, दाहिना पैर आगे, चारभुजा, दाहिने हाथ में वज्र, बायें हाथ में तर्जनी मुद्रा, तीखे दाँतवाले, भयंकर, मनुष्य की खोपड़ी तथा रत्नमुकुटधारी, त्रिभुवन में शत्रु का नाश करने वाले, करोड़ों सूर्य के समान तेजयुक्त, आठ नागों से विभूषित तथा मुद्राबन्धन करके स्थित।

अब मुद्रा का वर्णन किया जा रहा है।

दोनों अनामिकाओं को परस्पर लेपेटें, दोनों तर्जनियों को आकुंचित कर के बड़ी उंगली द्वारा मध्यमा तथा कनिष्ठा को आबद्ध करे। इस मुद्रा का प्रयोग करने वाले को भगवान् क्रोधपति त्रिभुवन की सिद्धि देते हैं। क्रोधपति के आगे दाहिनी ओर विष्णुमूर्त्ति बनाये। मण्डल के पश्चिम में कुबेर, उत्तर में कार्तिकेय, ईशान में गणेश, दक्षिण में सूर्य, नैर्ऋत में राहु तथा वायुकोण में निर्ऋति को बनाये। क्रोधभूपति के बायें भाग में चन्द्रमूर्ति बनाकर पूजन करे। क्रोधभूपति के वामभाग में सुवर्णवर्णा, समस्त अलंकारयुक्ता, तनिक हँसती हुई प्रभादेवी की मूर्त्ति अंकित करे। क्रोधभूपति के आगे पुष्पहस्ता लक्ष्मीदेवी, दाहिनी ओर अलंकार युक्त धूपहस्ता तिलोत्तमा, पीछे दीपहस्ता अलंकारयुक्ता विद्याधरीरूपा चन्द्रमुखी शशीदेवी, अग्निकोण में दिव्यकुण्डलधारिणी गन्धहस्ता रत्न-आभूषणयुता भद्रादेवी, उत्तर में वीणायुक्ता सरस्वती, वायुकोण में रत्नमालाविभूषिता सुंदर सुन्दरीरूपा विद्याधरी, ईशान में अलंकारभूषिता विद्याशक्ति तथा मण्डल की पूर्वादि आठों दिशाओं में इन्द्र, वह्नि, यम, निर्ऋति, वरुण, वायु, कुबेर, शशि तथा ईशान की मूर्त्ति का पूजन करे ॥ २ ॥

अथ दीक्षाविधिं वक्ष्ये प्राणिनां दुरितापहम्।
क्रोधमुद्राधरं शिष्यं नीलवस्त्रयुगेन च।
छादितं क्रोधगं चित्तं गुरुर्मन्त्रं निशामयेत् ॥ ३ ॥

अब प्राणियों का समस्त पाप नाश करने वाली दीक्षाविधि कहता हूँ। शिष्य को क्रोध मुद्राबद्ध (क्रोधभूपति की उपरोक्त मुद्रा में बाँध) करके उसे दो नीले वस्त्रों से ढाँके और शिष्य का मन क्रोधभूपति पर लगा हो, तब गुरु उसे क्रोधमन्त्र सुनाये ॥ ३ ॥

अथ क्रोधमनुं वक्ष्ये ह्यसाध्यं येन सिध्यति।
बीजं हालाहलं गृह्य क्रुं क्रों बीजमतः परम्।
भयङ्कराणंमाभाष्य सिताङ्गं क्षतजं स्थितम्।
प्रलयाग्निमहाज्वालामाभाष्य मनुमुद्धरेत्।
एवमुच्चारिते क्रोधः स्वयमेव प्रवेक्ष्यति।
बद्ध्वा तु क्रोधनीं मुद्रां शिरस्यास्ये च वक्षसि।
स्वयं वज्रधरो भूत्वा तावत्तिष्ठ द्वयं पुनः।
आभाष्य पातयेत्तोयं वज्रदेहो भवेन्नरः ॥ ४ ॥

अब क्रोधभूपति का मन्त्र कहा जा रहा है। इससे मनुष्य असाध्य साधन कर सकता है।

'ॐ हुं वज्र फट् क्रुं क्रों क्रुं क्रुं हुं हुं फट्'। इस मन्त्र का उच्चारण करने से क्रोधभैरव आते हैं। शिष्य के मस्तक, हृदय तथा मुख में क्रोधमुद्रा का बन्धन करके उक्त मन्त्र से जल को अभिमन्त्रित करके शिष्य के मस्तक आदि पर उसे छिड़के। इससे शिष्य की देह वज्र के समान दृढ़ हो जाती है ॥ ४ ॥

विसर्गात् प्रविश क्रोधकूर्चयुग्ममुदीरयेत्।
विशेदनेन मन्त्रेण क्रोधेनाभ्यर्चयेत् त्रिधा।
नीलवस्त्रं परित्यज्य दर्शयेत् कुलदेवताम्।
ततोऽभिषेचनार्थञ्च मुद्रामन्त्रं जले क्षिपेत्।
तेनाभिषिञ्चितः शिष्यो गुरुं सन्तोषयेत्ततः ॥ ५ ॥

'ॐ प्रविश क्रोध हुं हुं'। इस मन्त्र का ३ बार उच्चारण करके क्रोधभूपति की अर्चना करे और शिष्य के मस्तक से नीला वस्त्र हटाकर कुलदेवता का दर्शन कराये। तदनन्तर जल में मुद्रामन्त्र पढ़कर उससे शिष्य का अभिषेक करे। अब शिष्य भी गुरु को दक्षिणा आदि से प्रसन्न करे ॥ ५ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि क्रोधमन्त्रस्य साधनम्।
येन साधितमात्रेण सिद्धिः सर्वविधा भवेत्।
धृत्वा हस्तद्वयेनासौ भावयेच्चन्द्रमण्डलम्।
विषं भयङ्करं बीजं ज्वालामालाकुलं हृदि।
ध्यात्वा जपेदमुं मन्त्रं वक्ष्यमाणं शृणुष्व तत्।
विषं हनयुगं गृह्य विध्वंसय द्वयान्वितम्।
नाशयेति ततः पापं कालमन्त्रान्वितो मनुः।
शून्यं स्वमन्तरं चिन्त्यं हृदयं क्रोधमण्डितम्।
ज्वालामालाकुलं तस्य मध्ये ध्यायेन्निरञ्जनम्।
अनेन क्रोधमन्त्रेण चिन्तयेत् क्रोधभूपतिम्।
तारात् क्रोधावेशयावेशय कूर्चान्वितं मनुम्।
सञ्चिन्त्य वज्रपाणिश्च क्रोधाधीशं स्मरेद्बुधः।
हालाहलाल्लिखेद्वज्रं क्रोधावेशं प्रशामय।
कालबीजान्तमुच्चार्य चिन्तयेच्च स्वदेवताम्।
ततस्तु क्रोधमन्त्रेण षडङ्गन्यासमाचरेत्।
विषं वज्रयुतं बोधिमहाकालं न्यसेद्धृदि।
विषं हनयुगं वज्रं कूर्चाद्यं विन्यसेत् शिरे।
हालाहलं दहयुगं वज्रं कालं न्यसेत् शिखाम्।

विषमन्त्रयुतं वज्रमन्त्रश्च कवचं न्यसेत् ।
तारं दीप्तयुतं वज्रं महाकालश्च नेत्रयोः ।
विषं हनयुगं गृह्य दहयुग्मपदान्वितम् ।
क्रोधवज्रपदं तद्वत् सर्वदुष्टानतः परम् ।
ततो मारय वर्मास्त्रं दिग्बन्धान्तं षडङ्गकम् ।
अन्योऽन्यान्तरितां मुष्टिं कुञ्चयेत्तर्जनीयुगम् ।
विख्याता क्रोधमुद्रेयं हृदयात् क्रोधमाह्वयेत् ।
विषं वज्रधराद् गृह्य महाक्रोधपदं ततः ।
शमयेति पदाद् गृह्य ह्यनुपालयमुद्धरेत् ।
शीघ्रमागच्छसि पदं वर्मास्त्रं ज्वलनप्रिया ।
अनेन मण्डले स्थाप्यं ततोऽर्घ्यमनुमुद्धरेत् ।
विषं सर्वपदाद्देवतापदं समुदीरयेत् ।
प्रसीद कालबीजान्तां सविसर्गान्तु चण्डिकाम् ।
अनेन दापयेदर्घ्यं पूजार्थं मनुमुद्धरेत् ।
विषबीजं समुद्धृत्य नाशयेति पदं ततः ।
सर्वदुष्टान् हनयुगं पच भस्मी ततः कुरु ।
महाकालद्वयं चास्त्रं शिवोऽन्तमर्चनीमनुः ।
ताराद्वज्रं समुद्धृत्य महाचण्डिपदं ततः ।
बन्धद्वयं ततो दत्त्वा दशदिशो निरूढय ।
दिग्बन्धनमनुः प्रोक्तो वक्ष्ये माहेश्वरं मनुम् ।
शिवो व्याहृतयः स्वाहा महादेवमनुर्मतः ।
विषं विकालिकायुक्तामुद्धरेत् कुलभैरवीम् ।
श्रीचक्रपाणिने स्वाहा द्विःस्थोऽयं वैष्णवो मनुः ।
विषं विष्णुर्देवगुरुपदमाभाष्य तत्परम् ।
देवकाय शिवोऽन्तोऽयं प्रजापतिमनुर्मतः ।
विषं रौद्रं क्रोधपदं धारिणे च ततः परम् ।
वह्निकान्तास्त्रयुक्तोऽयं मनुः कौमाररूपिणः ।
बीजं हालाहलं प्रोच्य गणपतये च ततः ।
द्विठान्तोऽयं मनुः सम्यग्गाणपत्योऽयमीरितः ।
सान्तं सानन्तमुद्धृत्य नादबिन्दुसमन्वितम् ।
ततः प्राथमिकं धूम्रं ध्वजमादरसंयुतम् ।
सहस्रकिरणायेति पदाज्ज्वलनवल्लभा ।
हालाहलादिरुक्तोऽसौ मनुरादित्यरूपिणः ।

स्थितिबीजं समुद्धृत्य चन्द्रसूर्यपदं ततः।
पराक्रमाय वर्मास्त्रं द्विठोराहोर्मनुः स्मृतः।
विषं नटेश्वरपदं नटद्वयमतः परम्।
विषं भूतेश्वरं बीजं शिवोऽन्तोऽसौ नटेश्वरः।
हालाहलं समुद्धृत्य चन्द्राय पदमीरयेत्।
वह्निप्रियान्तमित्युक्तो मनुश्चन्द्रमसः स्मृतः।
विषं सौभ्रमनुं प्रोच्य नत्यन्तासौ प्रभेश्वरी।
तारं विष्णुप्रियाबीजं नमोऽन्तः श्रीमनुः स्मृतः।
विषं हरिप्रियाबीजं ह्रां नमः श्रीतिलोत्तमा।
पञ्चरश्मिरमाबीजं नत्यन्ते च शशीमता।
विषबीज जगन्मान्यां सनत्यन्तं समुद्धरेत्।
रम्भामनुरयं प्रोक्तो मण्डले क्रोधभूपतेः।
हालाहलं समुद्धृत्य सरस्वत्यै पदं ततः।
गाहयद्वयसर्वांश्च द्विठः सारस्वतो मनुः।
विषं यक्षेश्वरीबीजं धूम्रभैरव्यलङ्कृतम्।
वह्निप्रियायुतोऽन्तोऽयं प्रोक्तो यक्षेश्वरीमनुः।
हालाहलं समुद्धृत्य भूतिनीपदसंयुतम्।
ततः प्राथमिकं वह्निप्रियान्तो भूतिनीमनुः।
भूतिन्यष्टौ महाद्वारपालिन्यः समुदीरिताः।
विषं निरञ्जनं गृह्य तिष्ठ सुवासिनीपदम्।
शिरो नतिश्च भूतिन्या मन्त्रोऽयं हृदयाह्वयः॥ ६॥

अब क्रोधभैरव-मन्त्रसाधन कहा जा रहा है। इस साधन के करने मात्र से सभी प्रकार की सिद्धि प्राप्त होती है। दोनों हाथों से मुद्रा बनाकर चन्द्रमण्डल का चिन्तन करे। 'ॐ ज्वालासमाकुलं नमः' मन्त्र से हृदय में ध्यान करके तब इस मन्त्र को जपे—'ॐ हन हन विध्वंसय विध्वंसय नाशय नाशय पापं हुं फट् स्वाहा'। इसे जपते समय हृदय में क्रोधभैरव का चिन्तन करे।

'ॐ क्रोध आवेशय आवेशय' मन्त्र से वज्रपाणि क्रोधभूपति की अपने हृदय में भावना करे।

'ॐ वज्र क्रोधावेशय प्रशामय हुं'—इस मन्त्र से अपने इष्टदेव का चिन्तन करे।

अब क्रोधमन्त्र का षडङ्गन्यास करे—

ॐ वज्रबोधि हृदयाय नमः। ॐ हन हन वज्र हुं शिरसे स्वाहा। ॐ दह दह वज्र हुं शिखायै वषट्। ॐ फट् वज्र फट् कवचाय हुं। ॐ दीप्तं वज्र हुं

नेत्रत्रयाय वौषट् । ॐ हन हन दह दह क्रोधवज्र सर्वदुष्टान् मारय मारय हुं फट् स्वाहाअस्त्राय फट् ।

षडंगन्यास के अनन्तर दिग्-बन्धन करे। दोनों हाथों की मुट्ठी परस्पर संयुक्त करके दोनों तर्जनी को आकुंचित करे। इस प्रसिद्ध क्रोधमुद्रा द्वारा हृदय में क्रोधराज का आवाहन करे—

'ॐ वज्रधर महाक्रोध समयमनुपालय शीघ्रमागच्छसि त्वं हुं फट् स्वाहा'।

इस मन्त्र से मण्डल देवता को स्थापित करके अर्घ्य प्रदान करे।

उसका मन्त्र—ॐ सर्वदेवता प्रसीद हुं अः ह्रीं।

इस मन्त्र से पूजा करे—ॐ नाशय सर्वदुष्टान् हन हन पच पच भस्मीकुरु हुं हुं फट् स्वाहा।

दिग्बन्धन मन्त्र—ॐ वज्र महाचण्डि बन्ध बन्ध दशदिशो निरूढय'।

इस मन्त्र से महादेव-पूजन करे—'ॐ भूर्भुवः स्वः स्वाहा'।

इस मन्त्र से विष्णु-पूजन करे—ॐ अं आं असि चक्रपाणिने स्वाहा।

इस मन्त्र से ब्रह्मा-पूजन करे—ॐ विष्णुर्देवगुरु देवकाय स्वाहा।

कार्तिकेय की पूजा इस मन्त्र से करे—ॐ ह्रौं क्रोधधारिणे स्वाहा।

गणपति की पूजा का मन्त्र—ॐ गणपतये स्वाहा।

अब सूर्य-पूजन इस मन्त्र से करे—ॐ ह्रीं हं सः सहस्रकिरणाय स्वाहा।

राहु की पूजा इस मन्त्र से करे—ॐ चन्द्रसूर्याय पराक्रमाय हुं फट् स्वाहा।

नटेश्वर-पूजा इस मन्त्र से करे—ॐ नटेश्वराय नट नट ॐ ह्रीं स्वाहा।

चन्द्र की पूजा इस मन्त्र से करे—ॐ चन्द्राय स्वाहा।

प्रभादेवी का पूजन इस मन्त्र से करे—ॐ ह्रीं नमः।

लक्ष्मी-पूजन इस मन्त्र से करे—ॐ श्रीं नमः।

तिलोत्तमा का पूजामन्त्र—ॐ श्रीं ह्रां नमः।

शशीदेवी का पूजामन्त्र—ॐ श्रीं नमः।

क्रोधमण्डल में रम्भादेवी का पूजामन्त्र—ॐ जगन्मान्यायै नमः।

सरस्वती देवी का पूजामन्त्र—ॐ सरस्वत्यै गाहय गाहय सर्वान् स्वाहा।

यक्षेश्वरी-पूजन मन्त्र—ॐ षीं स्वाहा।

अष्टद्वार पर अष्टभूतिनी की पूजा क्रमशः करे, मन्त्र यह है—ॐ भूतिनी ह्रीं स्वाहा।

पुनः मण्डल में भूतिनी-पूजन इस मन्त्र से करे—ॐ सुवासिन्यै स्वाहा नमः ॥ ६ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि मुद्रां परमदुर्लभाम्।
यया विज्ञातया क्रोधः स्वयं सिध्यति नान्यथा।
अन्योऽन्यमङ्गुलीर्वेष्टच द्वे तर्जन्यौ प्रसारयेत्।
तर्जनीं कुण्डलीं कृत्वा मुद्रा पापप्रणाशिनी ॥ ७ ॥

अब परम दुर्लभ मुद्रा कही जाती है। इसे जानने मात्र से स्वयं क्रोधपति भूतनाथ सिद्ध हो जाते हैं। यह अन्यथा नहीं होती। दोनों हथेलियों की उँगलियों को परस्पर लपेट कर दोनों तर्जनियों को फैलाकर कुण्डलाकृति करे। इससे समस्त पाप नष्ट हो जाते हैं ॥ ७ ॥

अन्योऽन्यमुष्टिमास्थाय वेष्टयेत्तर्जनीद्वयम् ।
क्रोधस्य खड्गमुद्रेयं त्रैलोक्यक्षयकारिणी ॥ ८ ॥

दोनों मुट्ठियों को बाँधकर दोनों तर्जनियों को परस्पर लपेटे। यह है क्रोधराज की खड्गमुद्रा। इससे त्रिभुवन नष्ट किया जा सकता है ॥ ८ ॥

कृत्वा मुष्टि ततोऽन्योऽन्यं मध्यमे द्वे प्रसारयेत् ।
प्रोक्ता महाशिवा मुद्रा सद्यः सिद्धिप्रदायिनी ॥ ९ ॥
अस्या एव च मुद्राया मध्याङ्गुल्यौ प्रसारयेत् ।
तर्जन्यौ च दृढीकृत्य शिखामुद्रा प्रकीर्त्तिता ॥ १० ॥
अस्या एव च मुद्रायाः प्रसार्या तर्जनीद्वयम् ।
तर्जन्या मध्यमां स्पृष्ट्वा कनिष्ठानामिके तथा ।
धेन्वाख्येयं महामुद्रा नियुक्ताचार्यकर्मणि ॥ ११ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बन्द करके दोनों मध्यमा उँगलियों को फैलाना चाहिए। यह है महाशिवमुद्रा। यह सिद्धिदायिनी है। इस प्रकार की मुद्रा में मध्यमा तथा अनामिका को प्रसारित करके दोनों तर्जनियों को दृढ़ता से बद्ध करे। यह है शिखामुद्रा। उक्त शिखामुद्रा में दोनों तर्जनियों को फैलाकर उनसे क्रमशः मध्यमा, कनिष्ठा तथा अनामिका को स्पर्श करे। इसे धेनुमुद्रा कहते हैं। इसे सभी प्रकार के आचार्य (प्रमुख) कर्मों में प्रयुक्त किया जाता है ॥ ९–११ ॥

मुष्टिमन्योऽन्यमास्थाय ह्यङ्गुष्ठौ च प्रसारयेत् ।
धूपाख्येयं महामुद्रा नियुक्ता धूपकर्मणि ॥ १२ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठी बन्द करके दोनों अँगूठों को फैलाये। यह है धूप-मुद्रा। इससे धूपदान करना चाहिए ॥ १२ ॥

पृथगन्योऽन्यमास्थाय प्रसार्य वामतर्जनीम् ।
प्रधानावाहनी मुद्रा युक्तावाहनकर्मणि ॥ १३ ॥

दोनों मुट्ठियों को अलग-अलग बन्द करके बायें हाथ की तर्जनी को फैलाये। इससे आवाहन कार्य होता है ॥ १३ ॥

स्वदक्षहस्ताङ्गुष्ठेन कनिष्ठानखमाक्रमेत् ।
शेषाङ्गुलीः प्रसार्याथ बाहुमूले प्रविन्यसेत् ।
तस्मात् क्षिपेदियं मुद्रा दिग्बन्धनकरी स्मृता ॥ १४ ॥

अपने दाहिने हाथ के अँगूठे को कनिष्ठा उंगली के आगे ले जाये। शेष ४ उँगलियों को प्रसारित करके बाहुमूल में स्थापित करे। यह मुद्रा दिग्बन्धन कार्य में प्रशस्त कही गयी है ॥ १४ ॥

उत्ताना अङ्गुलीः कार्या भिन्नतर्जन्यनामिकाः ।
इयं मुद्रा महारौद्रवज्रकर्मणि पूजिता ।
उत्ताना अङ्गुलीः कृत्वा तर्जनीं वेष्ट्य कुञ्चयेत् ।
शङ्खमुद्रेति कथिता देवदेवस्य चक्रिणः ॥ १५ ॥

तर्जनी तथा अनामिका के अतिरिक्त समस्त उँगलियों को उठाये। यह मुद्रा क्रोधभैरव की पूजा में प्रयुक्त होती है। समस्त उँगलियों को उठाकर तर्जनी उँगली को लपेट कर संकुचित करे। यह है शंखमुद्रा। यह विष्णु-पूजा में प्रयुक्त होती है ॥ १५ ॥

अन्योऽन्यमङ्गुलीं वेष्ट्य कनिष्ठाञ्च प्रसारयेत् ।
कमण्डलुविधानाख्या मुद्रेयं परिकीर्त्तिता ॥ १६ ॥

समस्त उँगलियों को परस्पर लपेट करके कनिष्ठा उँगली को फैलाने से कमण्डलु मुद्रा बनती है ॥ १६ ॥

वाममुष्टिं विधायाथ तर्जनीमध्यमे ततः ।
प्रसार्य तर्जनीमुद्रा निर्दिष्टा ब्रह्मरूपिणः ॥ १७ ॥

बायें हाथ की मुट्ठी को बन्द करके तर्जनी तथा बीच की उँगली को फैलाये। इस मुद्रा को ब्रह्मा की पूजा में प्रयुक्त करते हैं ॥ १७ ॥

वामपाणिकृता मुष्टिर्मध्यमामपि तर्जनीम् ।
प्रसार्य तर्जनीं कुञ्च्य मध्यमाञ्चापि वेष्टयेत् ।
कनिष्ठाञ्च प्रसार्याथ मध्यपर्वणि धारयेत् ।
ख्याता गौरीति मुद्रेयं विशुद्धा शुद्धकर्मणि ॥ १८ ॥

बायें हाथ की मुट्ठी को बन्द करके मध्यमा एवं तर्जनी को फैलाये और तर्जनी द्वारा मध्यमा को लपेट कर रखे तथा कनिष्ठा को फैलाये। फैलाकर उसके मध्यपर्व पर रखे। यह है शुद्ध गौरीमुद्रा। यह समस्त शुभ कार्यों में विहित है ॥ १८ ॥

उत्ताना अङ्गुलीः कृत्वा मुष्टिं तत्र च धारयेत् ।
वामां कनीयसीं भग्नामङ्गुष्ठौ मुष्टिसंस्थितौ ।
वामाङ्गुष्ठं पर्वगतं दक्षिणेन च सङ्गतम् ।
आदित्यरथमुद्रेयं प्रोक्ता क्रोधाधिपेन च ॥ १९ ॥

समस्त उँगलियों को उठाकर मुट्ठी बन्द करे और अंगूठों को मुट्ठी के

ऊपर रखे। परन्तु बायें अंगूठे को ऊपरी पर्व पर्यन्त मुट्ठी को बन्द करे। यह है आदित्यमुद्रा। इसे स्वयं क्रोधराज ने कहा है ॥ १९ ॥

प्रसार्य दक्षिणं पाणिं भग्नं तर्जन्यनामिकाम्।
विधाय राहुमुद्रेयं क्रोधराजेन भाषिता ॥ २० ॥

दाहिना हाथ फैलाकर तर्जनी तथा अनामिका को कुछ झुकाये। यह राहुमुद्रा स्वयं क्रोधराज द्वारा उपदिष्ट है ॥ २० ॥

नटाकारं दक्षकरं कृत्वा मुष्टिं विनिक्षिपेत्।
तर्जनीं दक्षिणां वामे मुष्टिश्चापि प्रसारयेत्।
ज्येष्ठाङ्गुष्ठेन च तथा कनिष्ठानखमाक्रमेत्।
नटेश्वरस्य मुद्रेयं निर्दिष्टा सिद्धिदायिनी ॥ २१ ॥

दक्षिण हाथ की मुट्ठी को नटाकार (जैसे नट बन्द करते हैं) बन्द करे। वाम हाथ की तर्जनी फैलाये एवं वृद्धांगुलि द्वारा कनिष्ठा को स्पर्श करे। यह नटेश्वरमुद्रा समस्त सिद्धि देने वाली है ॥ २१ ॥

कनिष्ठान्योऽन्यमावेष्ट्य मुष्टिं कृत्वा पृथक् पृथक्।
उमाख्येयं महामुद्रा प्रभेश्वर्या इह शृणु।
करावुभौ भगाकारौ क्षिपेन्मूर्ध्नि प्रभेश्वरी।
अङ्गुलीसम्पुटौ मूर्ध्नि क्षिपेन्मुद्रा श्रियः स्मृता ॥ २२ ॥

पृथक् रूप से मुट्ठी बाँधकर कनिष्ठाद्वय को परस्पर लपेटना उमामुद्रा है। अब प्रभादेवी की मुद्रा कहते हैं। दोनों हाथों की हथेलियों को भगाकार (योनि के सदृश) करके सिर पर रखे। यह है प्रभेश्वरी मुद्रा। दोनों हाथों की उँगलियों को आपस में सटा करके मस्तक पर रखें। यह लक्ष्मीदेवी की प्रिय मुद्रा है, इससे लक्ष्मी की पूजा होती है ॥ २२ ॥

अन्योऽन्यमुष्टिमास्थाय कनिष्ठां तर्जनीं तथा।
वेष्टयेच्च शिरोदीपे शिखाकारेण भ्रामयेत्।
मुद्रेयं श्रीशशीदेव्या दर्शनेनैव सिध्यति ॥ २३ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठियों को परस्पर बन्द करके कनिष्ठा से तर्जनी का वेष्टन करे। इस मुद्रा के दर्शन मात्र से शशीदेवी सिद्ध हो जाती हैं ॥ २३ ॥

मुष्टिमन्योऽन्यमास्थाय ज्येष्ठाङ्गुल्यः प्रसारयेत्।
तर्जन्यां स्थापयेन्मूले मुद्रा सारस्वती स्मृता।
कृताञ्जलिं न्यसेन्मूर्ध्नि ज्ञेया मुद्रा तिलोत्तमा ॥ २४ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठी को परस्पर युक्त करके बड़ी उँगलियों को फैलाये तथा तर्जनी को मूल में स्थापित करे। इससे सरस्वती की पूजा

होती है। दोनों हाथों की अंजलि को मस्तक पर रखने से तिलोत्तमा की पूजा होती है ॥ २४ ॥

हस्तान्योऽन्यं पुटाकारं कृत्वा संस्थापयेद् यदि ।
इयं मुद्रा महादेव्या रम्भायाः परिकीर्तिता ॥ २५ ॥

दोनों हाथों को सम्पुटित करके हृदय पर रखें। इस मुद्रा से महादेवी रम्भा की पूजा होती है ॥ २५ ॥

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि महामण्डलवर्त्तिनीम् ।
इन्द्रादिलोकपालानां मनुमिष्टार्थसाधनम् ।
हालाहलञ्च शक्राय शिवः शक्रमनुर्मतः ॥ २६ ॥

अब महामण्डल मध्य के इन्द्रादि लोकपालों का मन्त्र कहा जाता है। 'ॐ शक्राय स्वाहा' से इन्द्र का पूजन करे ॥ २६ ॥

पञ्चरश्मिरग्नय इति शिरोऽन्तः परिकीर्त्तितः ।
तारोयमायेति शिरः प्रोक्तो याम्यो महामनुः ॥ २७ ॥

'ॐ अग्नये स्वाहा' मन्त्र से अग्नि तथा 'ॐ यमाय स्वाहा' से यम देवता का पूजन करे ॥ २७ ॥

विषबीजं समुद्धृत्य राक्षसाधिपतिस्ततः ।
पतये जययुग्मञ्च द्विठान्तो नैर्ऋतो मनुः ॥ २८ ॥
ङेऽन्तं वरुणमाभाष्य जलाधिपतये ततः ।
हरद्वयं शिरोऽन्तोऽयं तारादि वरुणो मनुः ॥ २९ ॥

निर्ऋति मन्त्र—'ॐ राक्षसाधिपतये जय जय स्वाहा'। वरुण मन्त्र—'ॐ वरुणाय जलाधिपतये हर हर स्वाहा' ॥ २८–२९ ॥

आदिबीजं समुद्धृत्य वायवे तारयुग्मकम् ।
वह्निजायान्त उक्तोऽयं मनुर्वायोर्महात्मनः ॥ ३० ॥
विषबीजं समुद्धृत्य कुबेराय पदं ततः ।
यक्षाधिपतये स्वाहा कुबेरस्य मनुः स्मृतः ॥ ३१ ॥
तारं चन्द्रायेति शिरः सौम्य ईशानगो मनुः ॥ ३२ ॥
आदिबीजं समुद्धृत्य ईशानाय द्विठन्ततः ।
ईशानस्य मनुः प्रोक्त ईशानदिशि संस्थितः ॥ ३३ ॥

वायुपूजन-मन्त्र — ॐ वायवे तार तार स्वाहा ।
कुबेरपूजन-मन्त्र—ॐ कुबेराय यक्षाधिपतये स्वाहा ।
सोमपूजन-मन्त्र — ॐ चन्द्राय स्वाहा। ईशानपूजन-मन्त्र—ॐ ईशानाय स्वाहा ॥ ३०–३३ ॥

मुद्रा सर्वेश्वरीपूर्वं सुन्दर्या अपि कथ्यते ।
यया विज्ञातया नूनं सिद्धिः सर्वविधा भवेत् ।
अन्योऽन्यमुष्टिमास्थाय कनिष्ठाञ्च प्रसारयेत् ।
कनिष्ठा कुण्डलाकारा मुद्रेयं सुन्दरी स्मृता ॥ ३४ ॥

सर्वेश्वरी सुन्दरी की मुद्रा कही जाती है। इसके जानने मात्र से सभी प्रकार की सिद्धि मिलती है। दोनों हाथों की मुट्ठी को सटाये और कनिष्ठा उंगलियों को फैलाकर कुण्डलाकृति करे। इससे सुन्दरी देवी सुप्रसन्न होती हैं ॥ ३४ ॥

मुष्टिमन्योऽन्यमास्थाय कनिष्ठे वेष्टयेदुभे ।
तर्जनीं कुण्डलीं कृत्वा मुद्रेयं भूतनायिका ॥ ३५ ॥

दोनों मुट्ठियों को परस्पर संयोजित करके दोनों कनिष्ठाओं को लपेटे तथा तर्जनी को कुण्डलाकृति करे। यह है भूतनायिका की मुद्रा ॥ ३५ ॥

अन्योऽन्यं मुष्टिमास्थाय तर्जनीं वेष्टयेत् पृथक् ।
मुद्रेयं द्वारपालिन्या अष्टभ्यः परिकीर्त्तिता ।
इन्द्रस्य पूजने वज्रमुद्रेयं परिकीर्त्तिता ॥ ३६ ॥

मुट्ठी को बन्द करके सटाये और दोनों तर्जनी को लपेटे। यह मुद्रा आठों दरवाजों की भूतिनी तथा इन्द्रादि देवों के पूजन में प्रयुक्त होती है ॥ ३६ ॥

कृत्वोत्तानं दक्षहस्तं तर्जनीन्तु प्रसारयेत् ।
आग्नेयीयं महामुद्रा याम्या निर्दिश्यते ततः ।
कृत्वा मुष्टिं दक्षहस्ते तर्जनीञ्च प्रसारयेत् ।
याम्याख्येयं महामुद्रा प्रोक्तातो नैर्ऋतिं शृणु ।
कृत्वा मुष्टिं दक्षहस्ते खड्गाख्येयन्तु राक्षसी ॥ ३७ ॥

दाहिनी हथेली को उठाकर तर्जनी उँगली को फैलाये। यह अग्नि की मुद्रा है। दाहिने हाथ की मुट्ठी बन्द करे और तर्जनी को फैलाये। यह यम नामक महामुद्रा कही जाती है। दाहिने हाथ की मुट्ठी बन्द करके उसे खड्ग-आकृति में उठाये। यह है निर्ऋति मुद्रा ॥ ३७ ॥

वाममुष्टिं विधायाथ तर्जनीन्तु प्रसारयेत् ।
तामेव कुण्डलाकारा मुद्रेयं वारुणी स्मृता ॥ ३८ ॥

बायें हाथ की मुट्ठी बन्द करके तर्जनी को फैलाये और उसे कुण्डलाकृति करे। यह है वारुणी मुद्रा ॥ ३८ ॥

मुष्टिं वामकरे कृत्वा मध्यमामपि तर्जनीम् ।
प्रसार्येयं पताकाख्या वायोर्मुद्रा प्रकीर्त्तिता ॥ ३९ ॥

बायें हथेली की मुट्ठी बन्द करके मध्यमा तथा तर्जनी को फैलाये। यह है वायुमुद्रा ॥ ३९ ॥

मुष्टिं दक्षकरे कृत्वा अङ्गुष्ठन्तु प्रसारयेत्।
प्रोक्ता वैश्रवणी मुद्रा धनाद्याकर्षणक्षमा ॥ ४० ॥

दाहिने हाथ की मुट्ठी बन्द करके बड़ी उँगली को फैलाये। इस कुबेर मुद्रा से धनादि का आकर्षण होता है ॥ ४० ॥

कृत्वान्योऽन्यकरे मुष्टिं तर्जनीश्चापि वेष्टयेत्।
सौम्याख्येयं महामुद्रा सोमस्य परिकीर्त्तिता ॥ ४१ ॥

दोनों मुट्ठियों को परस्पर सटाकर दोनों तर्जनी को लपेटे। यह सौम्य मुद्रा है, जिससे सोम (चन्द्र) की पूजा होती है ॥ ४१ ॥

वाममष्टिं विधायाथ ज्येष्ठाङ्गुष्ठकनीयसा।
नखमाँक्रम्य शेषाश्च प्रसार्येशी प्रकीर्त्तिता ॥ ४२ ॥

बायें हाथ की मुट्ठी बाँधकर कनिष्ठा उंगली द्वारा बड़ी उँगली को स्पर्श करे। यह है ईशान मुद्रा ॥ ४२ ॥

सृष्टिबीजं सिद्धिवज्रपदादापूरयद्वयम्।
वज्रबीजं नतिश्चान्ते पूर्णाख्योऽयं महामनुः ॥ ४३ ॥
स्थितिबीजाद्वज्रक्रोधमहामन्त्रपदात्ततः।
सिद्धाकर्षणमन्त्रोऽयं महामण्डलमध्यगः।
सम्पुटावञ्जलिं कृत्वा पुनर्मुद्रां प्रकीर्तयेत् ॥ ४४ ॥

क्रोधपति का पूर्ण मन्त्र—'ॐ सिद्धि वज्र पूरय पूरय हुं'। सिद्धाकर्षण मन्त्र—'ॐ वज्र हुं'।

महामण्डल-मध्यवर्त्ती क्रोधपति की पूजा उक्त मन्त्र से करे। तत्पश्चात् हाथ जोड़कर (सम्पुट करके) पुनः मुद्रा प्रदर्शित करे ॥ ४३–४४ ॥

मुष्टिमन्योऽन्यमास्थाय कनिष्ठे वेष्टयेदुभे।
प्रसार्य कुण्डलाकारं विधाय तर्जनीद्वयम्।
सिद्धाकर्षणमुद्रेयं सिद्धमाकर्षयेद् ध्रुवम् ॥ ४५ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठियों को परस्पर युक्त करके दोनों कनिष्ठाओं को लपेट लेना चाहिए। तर्जनीद्वय को फैलाकर कुण्डलाकृति करे। यह सिद्धाकर्षण मुद्रा सिद्धि को आकर्षित करती है ॥ ४५ ॥

तारश्च क्रोधशमयसाधने पदमुद्धरेत्।
सिध्यतीति पदात् सर्वदेवतानुपदं ततः।

मे शीघ्रं सिध्यतु पदं मनूत्तमपदं ततः ।
बद्ध्वा तु वज्रमुद्राख्यमिममुच्चारयेन्मनुम् ॥ ४६ ॥

इस मन्त्र से वज्रमुद्रा-बन्धन करे—'ॐ क्रोध शमयसाधने सिध्यतु सर्व-देवतानु मे शीघ्रं सिध्यतु' ॥ ४६ ॥

प्रालेयं बीजमुद्धृत्य जयद्वयमहापदात् ।
क्रोधाधिप इत्युक्त्वा क्रोधराजपदात्ततः ।
इदं भूतासनं प्रोक्त्वा दर्शयद्वयमीरयेत् ।
मर्षयद्वयमाभाष्य प्रतिगृह्लपदाद्विठः ।
महामण्डलमाभाष्य भूताशनमनुः स्मृतः ॥ ४७ ॥

'ॐ जय जय क्रोधाधिप क्रोधराज ! इदं भूतासनं दर्शय दर्शय मर्षय मर्षय प्रतिगृह्ल स्वाहा' । यह भूतासन मन्त्र है ॥ ४७ ॥

सम्पुटामञ्जलिं कृत्वाङ्गुलीनां विधृतिस्थितिः ।
पद्ममुद्रेयमाख्याता विसर्जनमनुं शृणु ॥ ४८ ॥

अंजलि बनाकर समस्त उंगलियों को समभाव में रखें । यह है पद्ममुद्रा । अब विसर्जन मन्त्र तथा मुद्रा कही जाती है ॥ ४८ ॥

विषात् पद्मोद्भवपदं निलयेति पदं ततः ।
सर्वदेवासनायेति शिरोऽन्तो मनुरीरितः ।
तारं सर्वसिद्धिपदं सिद्धिं देहि पदं ततः ।
गच्छेति पदमाभाष्य देवदेवं विसर्जयेत् ।
भूताधिप ! महाक्रोध ! सर्वसिद्धिप्रदायक ! ।
दत्त्वाभिलषितं देव गच्छ गच्छ यथासुखम् ।
मन्त्रेणानेन देवेशं यथाविधि विसर्जयेत् ॥ ४९ ॥

'ॐ पद्मोद्भव निलय सर्वदेवतासनं स्वाहा' ।

'ॐ सर्वसिद्धिं देहि गच्छ ॐ भूताधिप महाक्रोध सर्वसिद्धिप्रदायक दत्त्वा-भिलषितं देव गच्छ गच्छ यथासुखम्' यह विसर्जन मन्त्र है ॥ ४९ ॥

क्रोधमन्त्रस्य जापेन मण्डलस्य च दर्शनात् ।
स्मरणात् क्रोधराजस्य राज्यं त्रैधातुकं भवेत् ।
चेटकाः सर्वभूतानां यक्षगन्धर्वकिन्नराः ।
क्रोधमन्त्रेण नश्यन्ति सर्वलौकिकदेवताः ।
क्रोधार्णोच्चारणाद्देवाः पलायन्ते समन्ततः ।
प्रजपेदात्मरक्षार्थमेकलक्षं महामनुम् ।
वज्रमन्त्रस्य जापेन भवेद्वज्रसमं वपुः ।

सिद्धिकामो जपेत् पौर्णमास्यामभ्यर्च्य यत्नतः ।
क्रोधमुद्रां विधायाथ प्रजपेत् सकलां निशाम् ।
प्रभातसमये भूतानुकम्पा जायते ध्रुवम् ।
मुद्रा ज्वलति सर्वत्र तया ज्वलितया पुनः ।
अजरामररूपी च भवेत् क्रोधसमो नरः ।
एवमाराधितो वज्रो वाञ्छितार्थप्रदायकः ॥ ५० ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रे प्रमथाधिपक्रोधराजसाधनं नाम षष्ठं पटलम् ।

क्रोधभैरव मन्त्र का जप तथा क्रोधमण्डल का दर्शन करने से त्रैलोक्य राज्य मिलता है। यक्ष, गन्धर्व, किन्नर आदि उसके दास हो जाते हैं। क्रोधमन्त्र से समस्त लौकिक देवता नाश को प्राप्त होते हैं। इसके उच्चारण मात्र से पिशाचादि लौकिक देवता भाग जाते हैं। आत्मरक्षार्थ एक लक्ष जप करे। इसके जप से साधक का शरीर वज्र के समान हो जाता है। इस मन्त्र का पूर्णिमा की की रात्रि को अर्चना जप करे और क्रोधमुद्रा-बन्धन करके समस्त रात्रि पर्यन्त जप करे। इससे प्रातः के समय क्रोधदेवता की कृपा मिलती हैं। इनकी सिद्धि से साधक अजर-अमर हो जाता है। वह क्रोधराज के समान हो जाता है। उसे अभिलषित सिद्धि मिलती है ॥ ५० ॥

भूतडामर महातन्त्र का छठा पटल समाप्त हुआ।

सप्तमं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

त्रिजगद्वन्द्यदेवेश ! सर्वलोकभयङ्कर ! ।
देवतामारणं ब्रूहि वीरं सिध्यति साधने ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—हे देवेश्वर ! आप सब लोको में भय का उत्पादन करते हैं और तीनों लोकों में पूज्य हैं । आप देवतामारण-विधि का उपदेश करें, जिससे वीरगण सिद्ध हो जाते हैं ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि येन सिद्धिर्भवेद् ध्रुवम् ।
देवता म्रियते वापि मूर्ध्नि स्फुटति शुष्यति ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—अब सिद्धि-विधान कहता हूँ, जिससे देवताओं का मारण होता है और उनका शिर फट जाता है; साथ ही शरीर भी सूख जाता है ॥ २ ॥

सम्पूज्य ह्ययुतं वामपादेनाक्रम्य सञ्जपेत् ।
स्वयमायात्युमा देवी भार्या भवति यच्छति ।
रसं रसायनं दिव्यं दिव्यकामिकभोजनम् ।
सिद्धाद्यदानपक्षे तु लेपयेद् वृषभध्वजम् ॥ ३ ॥

वाम पाद द्वारा आक्रमण करके पूजा तथा १०००० जप करने से उमा देवी आकर नाना रस-रसायन, दिव्य भोजन द्रव्य प्रदान करती हैं ॥ ३ ॥

(इस श्लोक का सम्पूर्ण अर्थ नहीं दिया जा रहा है ।)

आक्रम्य वामपादेन मन्त्रमुच्चारयेदमुम् ।
आदिबीजं ज्वलयुगं वज्रेणेति पदं ततः ।
मारयद्वयमाभाष्य सकर्म साध्यमुद्धरेत् ।
ततः क्रोधद्वयं चास्त्रं जपेदष्टसहस्रकम् ।
जपमात्रेण सिध्यन्ति भूतिन्या म्रियते तथा ॥ ४ ॥
श्रीदेवीं वामपादेनाक्रम्य मन्त्रायुतं जपेत् ।
श्रीदेव्यायाति दद्याच्च कुसुमासनमुत्तमम् ।
वक्तव्यं स्वागतं भार्या कामिता राज्यदा भवेत् ॥ ५ ॥

गोरोचन से लक्ष्मीदेवी का चित्र बनाये । उसे बायें पैर से मारते हुए १०००० जप करे । इससे लक्ष्मीदेवी स्वयं आती है । तत्क्षण पुष्पासन प्रदान

करके स्वागत करे। जब वे वर माँगने को कहें तब उन्हें भार्या कहे। देवी साधक की कामना पूर्ण करके राज्य देती हैं ॥ ४-५ ॥

भैरवीं वामपादेनाक्रम्य मन्त्रायुतं जपेत्।
भैरवी शीघ्रमागत्य चेटीकर्म करोति च ॥ ६ ॥

भैरवी को वाम पाद से आक्रान्त करके इसी प्रकार १०००० जप करे (जैसे श्लोक ६में है)। भैरवी शीघ्र आकर दासी बन जाती हैं ॥ ६ ॥

चामुण्डां वामपादेनाक्रम्य मन्त्रायुतं जपेत्।
शीघ्रमागत्य चामुण्डा दासीवद्वश्यतामियात् ॥ ७ ॥

इसी प्रकार चामुण्डा को वाम पाद से आक्रान्त करते हुए १०००० जप करे। इससे वे तत्क्षण आकर दासी की तरह वशीभूता हो जाती है ॥ ७ ॥

अनेनैव विधानेन पूजयेत् सर्वदेवताम्।
गत्वैकलिङ्गं सम्पूज्य जपेदष्टसहस्रकम्।
वामपादेन चाक्रम्यान्वहं सप्तदिनानि च।
महादेवः समागत्य राज्यं यच्छति कामिकम्।
यदि यच्छति नागत्य म्रियते शुष्यते ध्रुवम् ॥ ८ ॥

इसी प्रकार से समस्त देवताओं की पूजा करे और शिवलिंग की पूजा करके ८००० जप करे। इसी प्रकार से वामपाद से आक्रान्त करते हुए सात दिन जप करने पर महादेव स्वयं आकर साधक की कामना परिपूर्ण करते हुए राज्य प्रदान करते हैं। यदि ऐसा नहीं करते तब देवता की मृत्यु हो जाती है अथवा उनका शरीर शुष्क हो जाता है ॥ ८ ॥

जपेदष्टसहस्रन्तु प्राग्वत् सप्तदिनानि च।
नारायणं वामपादेनाक्रम्यायाति यच्छति।
प्रार्थितं किङ्करो भूत्वा म्रियते शुष्यतेऽपि च ॥ ९ ॥

पूर्ववत् सप्ताह पर्यन्त प्रतिदिन वामपाद से आक्रमण करते हुए ८००० नारायणमन्त्र नित्य जपे। इससे देवता साधक के दास होकर प्रार्थित वस्तु देते हैं। यदि ऐसा नहीं करते तब उनका शरीर सूख जाता है अथवा वे मृत्यु को प्राप्त होते हैं ॥ ९ ॥

ब्रह्माणं वामपादेनाक्रम्य प्राग्वत् जपेत् सदा।
आगत्य किङ्करः स स्यादन्यथा म्रियते ध्रुवम् ॥ १० ॥

पूर्ववत् वामपद से आक्रमण करके ब्रह्मा का मन्त्र जपे। इससे ब्रह्मा साधक के दास हो जाते हैं। यह अन्यथा होने पर वे मृत्यु को प्राप्त होते हैं अथवा उनका शरीर सूख जाता है ॥ १० ॥

आदित्यं वामपादेनाक्रम्य सप्तदिनानि च।
जपेदष्टसहस्र वागत्य सिद्धिं प्रयच्छति।
अन्यथा म्रियते जप्त एवं चन्द्रः प्रयच्छति।
शतं स्वर्णपलं दद्यादन्यथा म्रियते ध्रुवम् ॥ ११ ॥

वामपाद से आक्रमण करते हुए ७ दिन आदित्यमन्त्र जपे (प्रतिदिन ८०००)। इससे आदित्य सिद्धि देते हैं, अन्यथा उनकी मृत्यु हो जाती हैं। इसी तरह चन्द्रमन्त्र का ७ दिन जप करने से वे साधक को प्रतिदिन एक पल सुवर्ण देते हैं, अन्यथा देवता की मृत्यु अवश्य हो जाती है ॥ ११ ॥

भैरवं वामपादेनाक्रम्य सप्तदिनानि च।
जपेदष्टसहस्रन्तु पूजयेच्च प्रयत्नतः।
दीपं मनुष्यतैलेन धूपं मासेन दापयेत्।
आमिषेणैव नैवेद्यं कृत्वा मन्त्रं जपेत् पुनः।
अर्द्धरात्रव्यतीते तु महानादं विमुञ्चति।
कुरुतेऽट्टाट्टहासञ्च वदेत्तं भक्षयाम्यहम्।
भयं तत्र न कर्त्तव्यं क्रोधबीजमनुं स्मरेत्।
मन्त्रोच्चारणमात्रेण सुस्थः साध्योऽत्र भैरवः।
दद्यात्त्रैधातुकं राज्यं सर्वाशाः पूरयत्यपि।
क्रोधभीत्या विनश्यन्ति सर्वलौकिकदेवताः ॥ १२ ॥

वामपाद से आक्रमण करके भैरव मन्त्र ७ दिन (८००० नित्य) जपे। प्रतिदिन जपान्त में पूजा करे, मनुष्य-तैल से दीप जलाये और मनुष्य-मांस द्वारा धूपदान करे। तदनन्तर मांस का नैवेद्य देकर जप करे। ऐसा करते-करते आधी रात में एक महाशब्द सुनाई पड़ता है। तदनन्तर अट्टहास के उपरान्त सुनाई पड़ता है कि मैं (तुम्हें) खाऊँगा। साधक भयभीत न होकर क्रोधमन्त्र का जप करे। मन्त्र के स्मरण मात्र से देवता शान्त होकर साधक की आशा परिपूर्ण करके त्रैलोक्य का राज्य प्रदान करते हैं। इस प्रकार से सिद्ध होने पर भी क्रोधराज के भय से समस्त लौकिक देवता (पिशाचादि) नष्ट हो जाते हैं ॥ १२ ॥

वामपादेन चाक्रम्य नटेशं पूर्ववज्जपेत्।
आगत्य किङ्करः स स्यादन्यथा म्रियते ध्रुवम् ॥ १३ ॥

वामपाद से आक्रमण करते हुए पूर्ववत् विधि से नटेश्वर का मन्त्र जपे। नटेश्वर जपान्त में आकर साधक के दास बन जाते हैं। ऐसा न करने पर उनकी मृत्यु हो जाती है ॥ १३ ॥

महाकालं वामपादेनाक्रम्याष्टसहस्रकम्।

दिनानि सप्त प्रजपेदागच्छति गणान्वितः।
चेटको भवति क्षिप्रमन्यथा म्रियते क्षणात् ।। १४ ।।

वामपाद से आक्रमण करते हुए ७ दिन पर्यन्त ८००० महाकाल मन्त्र जपे। जपान्त में महाकाल अपने परिजनों के साथ आते हैं और साधक के दास बन जाते हैं। अन्यथा तत्क्षण महाकाल की मृत्यु हो जाती है ।। १४ ।।

ईश्वरायतनं गत्वाऽयुतं सप्त दिनानि च।
जपेच्चतुर्मुखं वामपादेनाक्रम्य साधकः।
आगत्य परिवाराढ्यः किङ्करो भवति क्षणात्।
आरोप्य पृष्ठे त्रिदिवं दर्शयत्यपि यच्छति।
समानीयोर्वशीं देवीं भोज्यं काम्यं रसायनम्।
अन्यथा म्रियते प्राह स्वयं क्रोधाधिपोऽसकृत्।
एवं संसाधयेत् सिद्धिं कैङ्करीं क्रोधभक्तितः ।। १५ ।।

इति भूतडामरे महातन्त्रे कैङ्करीसाधनं नाम सप्तमं पटलम्।

शिवालय में ७ दिन पूर्ववत् चतुर्मुख ब्रह्मा को वामपाद से आक्रान्त करते हुए प्रतिदिन १०००० जप करें। जपान्त में चतुर्मुख अपने परिवार के साथ आकर साधक के दास हो जाते हैं तथा साधक को पीठ पर बैठाकर स्वर्ग ले जाते हैं, उर्वशी अप्सरा को ले आते हैं, विविध प्रकार के भोजन देते हैं, इच्छित पदार्थों तथा रस-रसायनों को देते हैं। ऐसा न करने पर चतुर्मुख की मृत्यु हो जाती है, इस प्रकार क्रोधराज ने बार-बार कहा है। क्रोधराज के प्रति भक्ति करने से ये सब सिद्धियाँ मिल जाती हैं ।। १५ ।।

भूतडामर महातन्त्र का सातवाँ पटल समाप्त।

अष्टमं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

प्रमथेश ! महादेव ! वह्नीन्द्वर्कत्रिलोचन ! ।
यदि तुष्टोऽसि देवेश ! चेटिकासाधनं वद ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरबी कहती हैं— हे प्रमथेश ! महादेव ! आपके तीन नेत्रों में क्रमशः चन्द्र, सूर्य एवं अग्नि विराजमान हैं । यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तब चेटिकासाधन का उपदेश कीजिए ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि चेटिकासिद्धिसाधनम् ।
मनुष्याणां हितार्थाय क्रोधभूपेन भाषितम् ।
आलस्यपापयुक्तानामाचार्यगुरुघातिनाम् ।
त्रैधातुकं भवेद्राज्यं येन क्रोधप्रसादतः ।
भूतिनी यक्षिणी नागकन्यका गणभञ्जिकाः ।
भूत्वा चेट्योऽवतिष्ठन्ति क्रोधमन्त्रस्य जापिनः ।
मन्त्रजापेन सिध्यन्ति नान्यथा यदि चेटिकाः ।
क्रोधसम्पुटितो जप्तो मनुरासाश्च सिध्यति ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—अब मैं चेटिका-साधन कहता हूँ । इसे क्रोधराज ने मानव के हितार्थ कहा है । इस साधन में आलसी, पापकर्मरत तथा आचार्य-घाती एवं गुरुघाती आदि पापी भी त्रैलोक्य के अधिपति हो जाते हैं । क्रोधराज का मन्त्र जप करने से भूतिनी, यक्षिणी, नागकन्याएँ तथा गणभंजिकाएँ भी दासी होकर सदा साधक के पास रहती हैं । यदि केवल मन्त्रजप से सिद्धि न मिले तब मन्त्र को क्रोधमन्त्र से सम्पुटित करके जप करने से तत्क्षण सिद्धि मिल जाती है ॥ २ ॥

हालाहलं समुद्धृत्य रौद्रबीजमतः परम् ।
कालबीजं त्रिधा कटुद्वयं हालाहलं पुनः ।
अमुकश्च त्रिधा क्रोधबीजं तारं कलान्वितम् ।
अनेन सहितं मन्त्रं जपेदष्टसहस्रकम् ।
भूतिन्यो दास्यतां यान्ति शीघ्रमागत्य नान्यथा ।
अक्षिण मूर्ध्नि स्फुटत्याशु कुर्वन्ति यदि नान्यथा ।
नाशयेत् सकलान् गोत्रान् क्रोधराजस्य जापतः ॥ ३ ॥

"ॐ ह्रौं क्रं क्रं क्रं कटु कटु ॐ अमुकं (यहाँ उस व्यक्ति के नाम का उच्चारण करे) क्रं क्रं क्रं ॐ अः"। इसका ८००० जप करने से समस्त भूतिनियाँ शीघ्र आकर दासी बन जाती हैं। आगमन न करने से भूतिनीगण के नेत्र तथा मस्तक फूट जाते हैं। क्रोधराज का मन्त्र जप करने से समस्त शत्रुकुल विनष्ट हो जाते हैं॥ ३॥

गोरोचनेन संलिख्य भूतिनीप्रतिमां शुभाम्।
आक्रम्य वामपादेन जपेदष्टसहस्रकम्।
हा हा ही ही महाशब्देनागत्यापि ब्रवीति च।
भो भोः किमाज्ञापयसि चेटी त्वं भव साधकः।
चेटीकर्म करोत्येवं यावदायुश्च भूतिनी॥ ४॥

भूतिनी की प्रतिच्छवि को गोरोचन से अंकित करके उसे बायें पैर से दबाकर आठ हजार मन्त्र का जप करे। इससे भूतिनी हा हा ही ही रूपी महाशब्द करती हुई आती हैं और साधक से पूछती हैं क्या कार्य है? आज्ञा करो। तब साधक कहे कि तुम मेरी दासी बनकर जीवनपर्यन्त रहो॥ ४॥

गोरोचनेन संलिख्य भूतिनीप्रतिमामिमाम्।
आक्रम्य वामपादेन जपेदष्टसहस्रकम्।
क्षणादेव समायाति यदि नायाति सम्मुखे।
सर्षपैस्ताडयेदुच्चैर्मन्त्रमेनमुदीरयेत्।
तारं भूतेश्वरीबीजं क्रोधबीजत्रयं ततः।
मम शत्रूनितिपदं मारयद्वयमीरयेत्।
बीजं प्राथमिकं कूर्चंबीजमादाय संयुतम्।
एवमुच्चारिते तीव्रजवेनाक्रमिता सती।
म्रियते भूतिनी जीवेन्मृताक्षौद्राभिषेचनात्।
एवं सा जीविता दद्याद्वस्त्रालङ्कारभोजनम्।
दासीकर्म करोत्येवं वज्रपाणिप्रसादतः॥ ५॥

भूतिनी की छवि गोरोचन से अंकित करके उसे बायें पैर से आक्रान्त करते हुए ८००० मन्त्र का जप करे। जपान्त में तत्क्षण भूतिनी आती हैं। यदि वे न आये तब 'ॐ ह्रीं कं कं कं मम शत्रून् मारय मारय ह्रीं हुं अः' मन्त्र से सफेद सरसों से भूतिनी की प्रतिमा का ताड़न करे। इससे भूतिनी जल्दी से आ जाती हैं। यदि उक्त ताड़ना से भूतिनी की मृत्यु हो जाये तब मधु द्वारा उसके अंगों का सिंचन करे। भूतिनी जीवित होकर वस्त्र, अलंकार, भोजन देती हैं और साधक की दासी बन जाती है॥ ५॥

विहारद्वारमागत्य जपेदष्टसहस्रकम्।

यामिन्यां कुञ्जरवती भूतिन्यायाति तोषिता ।
बलिदानैर्वदेद् वत्स ! किमाज्ञापयसि स्फुटम् ।
साधकेनापि वक्तव्यं मातृवत् परिपालय ।
अनौपम्यानि वस्त्राणि भोज्यानि भूषणानि च ।
ददाति कुञ्जरवती म्रियते शुष्यतेऽन्यथा ॥ ६ ॥

इति भूतडामरमहातन्त्रे चेटिकासाधनविधिरष्टमं पटलम् ।

विहार-गृह के द्वार पर बैठकर ८००० मन्त्र का जप करे। उस समय भूतिनी हाथी पर बैठकर आती हैं। तब साधक उन्हें बलि, पूजा आदि प्रदान करे। भूतिनी प्रसन्न होकर कहती हैं—"तुम्हारा क्या कार्य करूँ? स्पष्ट कहो"। साधक कहे—'आप माता के समान मेरा पालन करें'। भूतिनी साधक को अनुपम कपड़े, नाना व्यंजन, नाना आभूषणादि देती है। यदि ऐसा न करे तब भूतिनी मर जाती है या उसकी देह सूख जाती है ॥ ६ ॥

भूतडामर महातन्त्र का आठवाँ पटल समाप्त ।

9373

नवमं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

व्योमवक्त्र ! महाकाय ! सृष्टिस्थितिलयात्मक ! ।
भूतिनीसाधनं ब्रूहि कृपा ते यदि वर्त्तते ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी भैरव से जिज्ञासा करती हैं—हे व्योमवक्त्र ! हे महाकाय ! हे सृष्टिस्थितिलयकारक ! यदि आपकी कृपा मुझ पर है तब मुझसे भूतनी-साधन कहें ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरव उवाच

भूतिनीसाधनं वक्ष्ये क्रोधराजेन भाषितम् ।
दरिद्राणां हितार्थाय संसारार्णवतारकम् ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—हे भैरवी ! दरिद्रों के हितार्थ मैं क्रोधराज द्वारा कहा गया भूतिनी-साधन कहता हूँ, तुम सुनो । यह भूतिनी-साधन संसार-सागर से छुटकारा दिलाने वाला है ॥ २ ॥

सा भूतिनी कुण्डलधारिणी च सिन्दूरिणी चाप्यथ हारिणी च ।
नटी तथा चातिनटी च चेटिका कामेश्वरी चापि कुमारिका च ॥
भार्यामातृभगिन्यश्च स्वेच्छयैव भवन्ति हि ॥ ३ ॥

भूतिनीदेवी कुण्डलधारिणी, सिन्दूरिणी, हारिणी, नटी, अतिनटी, चेटिका, कामेश्वरी तथा कुमारिका आदि नाना रूप धारण करके साधक की इच्छा के अनुसार भार्या, माता, बहन आदि रूप से साधक की अभिलाषाओं को पूर्ण पूर्ण करती हैं ॥ ३ ॥

चम्पावृक्षतले रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम् ।
दिनानि त्रीणि जपान्त उदारार्चनमाचरेत् ।
धूपश्च गुग्गुलुं दत्वा पुनारात्रौ जपेन्मनुम् ।
अर्धरात्रिगते देवी समागच्छति भूतिनी ।
दद्याद्गन्धोदकेनार्घ्यं तुष्टा मात्रादिका भवेत् ।
मातेत्यष्टशतानाञ्च वस्त्रालङ्कारभोजनम् ।
भगिनी चेत्तदा नारीं दूरादाकृष्य सुन्दरीम् ।
रसं रसाञ्जनं दिव्यं विधानञ्च प्रयच्छति ।
भार्या च पृष्ठमारोप्य स्वर्गं नयति कामिता ।

दीनाराणां सहस्राणि नित्यं रसरसायनम् ।
भोजनं कामितं देवी साधकाय प्रयच्छति ।। ४ ।।

रात्रि में चम्पावृक्ष के नीचे भूतिनी मन्त्र का ८००० जप करना चाहिए। ३दिन जप करके महापूजा करे। तदनन्तर गुग्गुलु की धूप देकर पुनः मन्त्र जपे। तब अर्धरात्रि में भूतिनी देवी आती हैं। उन्हें चन्दन के पानी का अर्घ्य देना चाहिए। भूतिनी देवी प्रसन्न होकर साधक की इच्छा से माता, पत्नी या बहन बन जाती हैं। माता होने पर ८०० वस्त्र, अलंकार तथा भोजन देती हैं। भगिनी की स्थिति में सुन्दर स्त्री, नाना रसायन तथा भोज्य वस्तु देती हैं। भार्या की स्थिति में साधक को पीठ पर बैठाकर स्वर्ग ले जाती हैं और नित्य १००० स्वर्णमुद्रा तथा नानाविध रस, रसायन तथा भोजन द्रव्य भी देती हैं ॥ ४ ॥

रात्रौ गत्वा श्मशाने च जपेदष्टसहस्रकम् ।
जपान्ते कुण्डलवती समागच्छति सन्निधिम् ।
रुधिरार्घ्येण सन्तुष्टा मातृवत् पालयत्यपि ।
पञ्चविंशतिदीनारं ददाति म्रियतेऽन्यथा ।। ५ ।।

रात्रि के समय श्मशान में जाकर ८००० जप करे। जपान्त में कुण्डल धारण की हुई भूतिनी साधक के पास आती है। उन्हें रक्त का अर्घ्य देना चाहिए। इससे देवी प्रसन्न होकर साधक का माता के समान पालन करती हैं और २५ स्वर्णमुद्राओं को उसे अर्पित करती हैं। ऐसा न करने पर भूतिनी की मृत्यु हो जाती है ।। ५ ।।

शून्ये देवालये रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम् ।
सिन्दूरिणी समायाति भार्याकर्म करोति च ।
वस्त्रादिभोजनं तुष्टा द्वादशेऽह्नि प्रयच्छति ।
पञ्चविंशतिदीनारं भोज्यञ्चापि रसायनम् ।। ६ ।।

शून्य देवालय में बैठकर रात्रि में ८००० जप करे। इससे सिन्दूरिणी देवी आकर उपासक के साथ भार्या का व्यवहार करती हैं। १२ दिनों में प्रसन्न होकर वस्त्र, भोजन आदि पदार्थ, २५ सुवर्णमुद्राएँ तथा रसायन भी देती हैं ।। ६ ।।

गत्वैकलिङ्गं यामिन्यां जपेदष्टायुतं ततः ।
हारिणी शीघ्रमागत्य ब्रवीति किं करोमि च ।
साधकेनापि वक्तव्यं भार्या भव सुशोभने ! ।
कामिताष्टौ दीनाराणि भोज्यं यच्छति कामिनी ।। ७ ।।

एक शिवलिंग के समीप जाकर रात्रि में ८०००० जप करे। उससे हारिणी देवी शीघ्र आकर पूछती हैं कि मैं क्या करूँ? साधक को कहना

चाहिए कि आप मेरी भार्या बनें। भूतिनी सन्तुष्ट होकर ८ स्वर्णमुद्राएँ तथा भोज्यवस्तु उसे अर्पित करती हैं ॥ ७ ॥

वज्रपाणिगृहं गत्वा सन्निधौ प्रतिमां लिखेत्।
करवीरसुमं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
नट्यार्द्धरात्र आयाति साधकस्यान्तिके वशात्।
सरक्तचन्दनेनार्घ्यं दत्त्वाऽऽज्ञापयसीति किम्।
वक्तव्यं साधकेनापि किङ्करी मे भवेति च।
वस्त्रालङ्करणं भोज्यमन्वहं प्रतियच्छति।
व्ययं सर्वं प्रकर्त्तव्यं न किञ्चिद्धारयेद् गृहे ॥ ८ ॥

वज्रपाणि के मन्दिर में जाकर एक प्रतिमा बनाये। उसकी अर्चना कनेर के पुष्पों द्वारा करके ८००० जप करे। इस प्रकार जप करने पर अर्धरात्रि में नटी देवी आती हैं। उन्हें रक्तचन्दन-मिश्रित जल का अर्घ्य प्रदान करना चाहिए। इससे देवी प्रसन्न होकर साधक से कार्य पूछती हैं। तब साधक कहे—'हे देवी! तुम मेरी दासी हो जाओ'। देवी साधक की दासी बनकर प्रतिदिन वस्त्र, अलंकार तथा भोजन आदि पदार्थ देती है। इसको उसी दिन खर्च कर देना चाहिए, बचाकर नहीं रखना चाहिए ॥ ८ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
सप्तदिनावसानेषु पूजां कुर्यादनुत्तमाम्।
तिरोभावं गते सूर्ये धूपयेच्चन्दनेन च।
जपेद् यावदर्द्धरात्रं समायाति महानटी।
आगता सा भवेद् भार्या नित्यं स्वर्णपल शतम्।
प्रभाते याति सन्त्यज्य सर्वशेषं व्ययेद् बुधः।
तद्व्ययाभावतो भूयो न ददाति प्रकुप्यति ॥ ९ ॥

नदी के संगमस्थल पर जाकर ८००० मूल मन्त्र जपे। ऐसा ७ दिन तक करे और जपान्त में विविध उपचारों से देवी का पूजन करे। सूर्य अस्त होने पर चन्दन की धूप जलाये। तदनन्तर अर्धरात्रि तक जप करने से महानटी आती हैं। वे भार्या होकर साधक को नित्य १०० पल (४०० तोला) स्वर्ण प्रदान करती हैं। प्रभात होते ही वे लौट जाती हैं। साधक को प्रतिदिन स्वर्ण को खर्च कर देना चाहिए, अन्यथा महानटी कुपित होकर स्वर्ण देना बन्द कर देती हैं ॥ ९ ॥

यामिन्यां स्वगृहद्वारे जपेदष्टसहस्रकम्।
त्र्यहं यावज्जपान्तेऽसौ समायात्यन्तिके पुनः।
चेटीकर्म करोत्येवं गृहसंस्कारकर्म च।
करोति क्षेत्रजं कर्म वज्रपाणिप्रसादतः ॥ १० ॥

रात्रि में अपने घर के द्वार पर बैठकर ८००० जप करे। ३ दिन ऐसा करने पर भूतिनी साधक के पास आकर घर की सफाई आदि सम्पूर्ण दासीकर्म करती है ॥ १० ॥

गत्वा मातृगृहं रात्रौ मत्स्यमांसं प्रदापयेत्।
सहस्रन्तु जपेत् कामेश्वरीं सप्तदिनावधि।
आगता यदि चेद्भक्त्याऽर्घ्येण सन्तोषिता सती।
वदेत् किमाज्ञापयसि भव भार्या प्रिया मम।
आशाश्च पूरयत्येवं राज्यं यच्छति कामिता॥ ११ ॥

रात्रि में मातृगृह (देवी के मन्दिर) में जाकर मांस-मछली देकर सात दिनों तक) १००० जप करे। इससे कामेश्वरी देवी आती हैं। उनके आने पर साधक भक्तियुक्त हो अर्घ्य प्रदान करे। इससे देवी सन्तुष्ट होकर कार्य पूछती हैं, तब साधक कहे कि आप मेरी भार्या बनें। इससे देवी प्रसन्न होकर साधक की समस्त आकांक्षाएँ पूर्ण करती हैं और कामना करने पर राज्य भी देती हैं ॥ ११ ॥

रात्रौ देवगृहं गत्वा शुभां शय्यां प्रकल्पयेत्।
जातीपुष्पेण वस्त्रेण सितगन्धेन पूजयेत्।
धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
जपान्ते शीघ्रमायाति चुम्बत्यालिङ्गयत्यपि।
सर्वालङ्कारसंयुक्ता सम्भोगादिसमन्विता।
यच्छत्यष्टौ दीनाराणि भार्या भवति कामिता।
वाससी भोजनं दिव्यं कामितञ्च रसायनम्।
कुबेरस्य गृहादेव द्रव्यमाकृष्य यच्छति।
इत्याह भगवान् क्रोधभूपतिः स्वयमेव हि॥ १२ ॥

इति भूतडामरमहातन्त्रे भूतिनीसाधनं नाम नवमं पटलम्।

वहाँ रात्रि के समय किसी देवालय में जाकर उत्तम शय्या बनाकर चमेली, वस्त्र तथा सफेद चन्दन से पूजन करे। तदनन्तर गुग्गुलु से धूपित करके ८००० जप करे। जपान्त में देवी आकर साधक का चुम्बन, आलिंगन लेती हैं। नाना अलंकार से सुशोभना होकर भार्या रूप से सम्भोगादि के पश्चात् साधक को ८ स्वर्णमुद्रा, दो वस्त्र, मनोहर भोजन तथा कुबेर के खजाने से धन को लाकर देती हैं। भगवान् क्रोधराज ने स्वयं यह साधना प्रकार कहा है॥ १२ ॥

भूतडामर महातन्त्र का भूतिनीसाधन नामक नवम पटल समाप्त।

दशमं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

कालवक्त्र ! महाभीम ! प्रमथेश ! त्रिलोचन ! ।
ब्रह्मादिमारणं ब्रूहि यदि तुष्टोऽसि भैरव ! ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—हे कालवक्त्र ! महाभीम ! प्रमथेश ! त्रिलोचन ! भैरव ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तो ब्रह्मादि देवों के मारण का उपाय कहें ॥१॥

उन्मत्तभैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि ह्यसाध्यं येन सिध्यति ।
मारणं ब्रह्ममुख्यानां भूतप्रत्ययकारकम् ।
प्रालेयं हनयुग्मश्च सर्वं मारय मारय ।
वज्रज्वालेन कूर्चास्त्रमयं मन्त्रः सुरान्तकः ।
त्रिशत्सहस्रजापेन वज्रज्वालाकुला दिशः ।
अदूरे बहुशस्त्रस्योच्चाराद् ब्रह्माजशङ्कराः ।
शक्राद्या लौकिका देवा यक्षगन्धर्वकिन्नराः ।
एषां स्त्रियो विनाशत्वं खण्डखण्डं समागताः ।
बोधिसत्वं मुहुः प्राहुर्विस्मिताः सर्वदेवताः ।
प्रणिपत्य सक्रुद्देवानस्माकं निग्रहं कुरु ।
वयं सिद्धिं प्रयच्छामो जम्बूद्वीपे कलौ युगे ।
दुःशीलपापयुक्तेभ्योऽन्यथा जहि सुरान्तक ! ।
तथेत्युक्त्वा वज्रपाणिर्ब्रवीति भूतिनीमनुम् ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—मैं ब्रह्मादि के मारण का मन्त्र कहता हूँ। इससे असाध्य कार्य भी सिद्ध हो जाता है। 'ॐ हन हन सर्वं मारय मारय वज्रज्वालेन हुं फट्'। यह मन्त्र समस्त देवताओं के लिए यम के समान मृत्युदायक है। इसे ३०००० जपने से सभी दिशाएँ वज्रज्वाला से व्याकुल हो उठती हैं। ब्रह्मा-महादेव-विष्णु-इन्द्रादि देवगण, यक्ष, गन्धर्व, किन्नर तथा इनकी स्त्रियों का भी विनाश हो जाता है। इस प्रकार का मन्त्र कहने पर देवगण विस्मित होकर क्रोधराज को प्रणाम करके कहते हैं कि हम कलिकाल में जम्बूद्वीप के निवासियों को सिद्धि प्रदान करेंगे ॥ २ ॥

प्रालेयं श्रीशशीदेव्या ह्यनादिश्रीतिलोत्तमा ।
सानादीं श्रीं मनुं स्मृत्वा युक्तं काञ्चनमालया ।

विषं श्रीवर्मसंयुक्तमाभाष्य कुलहारिणी।
तारं वर्मसमायुक्तां रत्नमालेति पञ्चमीम्।
तां स इति रम्भाख्यां विषं श्रीमुर्वशी परा।
अनादिबीजमाभाष्य भूषण्युक्त्वाप्सरः क्रमात्।
क्रोधं नत्वा प्रवक्तव्यं यथा संसिद्धिसाधनम्॥ ३॥

ॐ श्रींशशी देवी। ॐ श्रीं तिलोत्तमा। श्रीं ह्रीं काञ्चनमाला। ॐ श्रीं हुं कुलहारिणी। ॐ हुं रत्नमाला। ॐ हुं रम्भा। ॐ श्रीं उर्वशी। ॐ रमा-भूषणी। क्रोधभैरव को नमस्कार करके इन समस्त भूतिनी-साधन मन्त्रों को मैंने कहा है॥ ३॥

शैलशृङ्गं समारुह्य जपेल्लक्षं समाहितः।
पौर्णमास्यां समभ्यर्च्य घृतदीपं निवेदयेत्।
प्रजपेत् सकलां रात्रिमायाति रजनीक्षये।
चन्दनार्घ्येण सन्तुष्टा वरं वरय वक्ति सा।
कामिता सा भवेद्भार्या प्रयच्छति रसायनम्।
सहस्रवत्सरं पाति शशी दद्याद् यथेप्सितम्॥ ४॥

पहाड़ की चोटी पर बैठकर साधक १ लाख मन्त्र जपे। अन्त में पूर्णिमा तिथि को अर्चना करके घी का दीपक जलाकर देवी को समर्पित करे। समस्त रात्रि में जप करने पर रात्रि के अन्त में देवी आती हैं। उन्हें तत्काल चन्दन का अर्घ्य प्रदान करे। इससे देवी सन्तुष्ट होकर साधक से वर माँगने को कहती हैं। शशीदेवी भार्या बनकर इच्छा के अनुरूप रसायन द्रव्य देती हैं और सहस्र वर्षों तक साधक का पालन करती हैं॥ ४॥

जपेदयुतमानन्तु क्षीराशी सप्तवासरान्।
चन्दनेन विधायाथ मण्डले सप्तमे दिने।
सम्पूज्य शक्तितः शुक्लाष्टम्यां पर्वतमूर्द्धनि।
प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशाक्षये।
आगत्य पुरतस्तिष्ठेत् स्मितवक्त्रोत्तमस्तनी।
चुम्बत्यालिङ्गयत्याशु भार्या भवति कामिता।
राज्यं यच्छति सन्तुष्टा त्रिदिवं दर्शयत्यपि।
पञ्चवर्षसहस्रन्तु भुक्त्वा भोगमनुत्तमम्।
मृते राजकुले जन्म प्रयच्छति तिलोत्तमा।
अन्यथा म्रियते शीघ्रं विपरीतं कृते सति॥ ५॥

साधक केवल दुग्ध पीकर सात दिन तक १०००० जप करे। सातवें दिन चन्दन का मण्डल बनाकर शक्ति के अनुसार पूजन करे। शुक्लपक्ष की अष्टमी

तिथि को पर्वत-शिखर पर चढ़कर जप करे। समस्त रात्रि जप करने पर रात्रि के अन्तिम भाग में देवी प्रकट होती हैं। वे साधक की भार्या बनकर चुम्बन-आलिंगन करके राज्य प्रदान करती हैं। तदनन्तर साधक को स्वर्ग दिखलाती हैं। इस प्रकार ५००० वर्षों तक साधक विविध भोग भोगकर मृत्यु के अनन्तर राजकुल में जन्म लेता है ॥ ५ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा मण्डलं चन्दनेन च।
धूपं दत्त्वाऽगुरुञ्चैव बलिश्चापि प्रदापयेत्।
जपेदष्टसहस्रन्तु नित्यं सप्तदिनावधि।
सप्तमे दिवसे पूजां कृत्वा धूपं प्रदापयेत्।
प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशाक्षये।
चन्दनार्घ्येण सन्तुष्टा वरं वरय वक्ति सा।
साधकेनापि वक्तव्यं मातृवत् परिपालय।
वस्त्रालङ्करणं भोज्यं साधकेभ्यः प्रयच्छति ॥ ६ ॥

किसी नदीसंगम के तट पर चन्दन द्वारा मण्डल बनाकर अगरु की धूप देकर बलि प्रदान करे। ७ दिन तक प्रतिदिन ८००० जप करे। सातवें दिन जपान्त में पूजा करके धूप प्रदान करके रात्रि में पुनः मन्त्र का जप करे। रात्रि के अन्त में जब देवी उपस्थित होती हैं, तब उन्हें तत्काल चन्दन का अर्घ्य देना चाहिए। इससे देवी प्रसन्न होकर वर माँगने को कहती हैं। तब साधक कहे—हे देवी! माता की भाँति मेरा पालन करो। तदनन्तर देवी साधक को वस्त्र, अलंकार तथा भोज्यवस्तु देती हैं ॥ ६ ॥

न तिथिर्न च नक्षत्रं नोपवासो विधीयते।
नदीतीरं समास्थायायुतं मासं जपेन्मनुम्।
धूपं दत्त्वा समभ्यर्च्य पुनारात्रौ जपेत्ततः।
अर्धरात्रे समायाति प्राग्वदर्घ्यं प्रदापयेत्।
कामिता सा भवेद्भार्या प्रत्यहं सम्प्रयच्छति।
दीनाराणां लक्षमेकं सिद्धिद्रव्यं रसायनम्।
दर्शयेत् पृष्ठमारोप्य त्रिदिवं कुलहारिणी ॥ ७ ॥

किसी तिथि तथा नक्षत्र की विवेचना न करके नदी के तट पर बैठकर दश हजार मन्त्र का जप करे। इसमें उपवास करने की भी आवश्यकता नहीं है। एक मास पर्यन्त जप करके धूपदान करके रात्रि में पुनः जप करे। इस प्रकार अर्धरात्रि तक जप करने पर देवी आती हैं। तत्क्षण साधक उन्हें अर्घ्य प्रदान करे। इससे देवी प्रसन्न होकर साधक की पत्नी होकर रहती है तथा प्रतिदिन एक लक्ष सुवर्णमुद्रा तथा नाना रसायन द्रव्य प्रदान करके अपनी पीठ पर बैठाकर स्वर्गपुरी दिखलाती हैं ॥ ७ ॥

देवतायतनं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
मासमेकन्तु मासान्ते पौर्णमास्यां पुनर्जपेत् ।
समभ्यर्च्यार्द्धरात्रे तु श्रूयते नूपुरध्वनिः ।
समायात्यन्तिकं दद्यात् पुष्पासनमनुत्तमम् ।
किमिच्छसि वद त्वं मे भव भार्येति साधकः ।
भार्याकर्म करोत्येवं भोज्यं यच्छति कामिकम् ।
पाति वर्षसहस्राणि रत्नमाला मनोरमा ॥ ८ ॥

साधक किसी देवालय में जाकर आठ हजार जप करे। ३० दिन जप करने पर मासान्त की पूर्णिमा से पुनः जप आरम्भ करे। विविध अर्चना करने के बाद आधी रात में नूपुर-ध्वनि सुनाई देती है। कुछ समय के पश्चात् देवी उपस्थित होती हैं, तब उन्हें पुष्पों का आसन प्रदान करे। इससे देवी प्रसन्न होकर साधक से उसकी इच्छा पूछती हैं। तब साधक उनसे कहे—'आप मेरी भार्या बनें'। इस प्रकार की सिद्धि मिलने पर सुन्दरी रत्नमाला देवी भार्याकर्म करती हैं और वांछित भोज्य द्रव्य देती हैं। वे १००० वर्ष पर्यन्त साधक का परिपालन करती हैं ॥ ८ ॥

प्रतिपत्तिथिमारभ्य कृत्वा चन्दनमण्डलम् ।
धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
त्रिसन्ध्यां पौर्णमास्यान्तु पूजां कृत्वा सुशोभनाम् ।
प्रजपेत् सकलां रात्रिं समायाति निशाक्षये ।
कामिता सा भवेद्भार्या त्वन्यथा म्रियते ध्रुवम् ।
ददाति कामितं द्रव्यं भोज्यद्रव्यं रसायनम् ।
दशवर्षसहस्राणि जीवत्यन्ते मृते पुनः ।
जन्म राजकुले दद्यात् रम्भा क्रोधप्रसादतः ॥ ९ ॥

पूजास्थान पर चन्दन से मण्डप बनाकर गुग्गुलु से धूपित करे। उसके बाद ८००० रम्भामन्त्र जपे, जिसे पहले कहा गया है। प्रतिपदा से लेकर चतुर्दशी तक जप करके पूर्णिमा को विविध उपहारों द्वारा तीनों सन्ध्याओं में पूजन करे और सम्पूर्ण रात्रि जप करे। रात्रि के अन्तिम भाग में देवी आकर साधक की पत्नी बन जाती हैं और साधक को इच्छित द्रव्य तथा विविध भोजन पदार्थ देती हैं और साधक के १०००० वर्षों तक जीवित रहकर मरने के उपरान्त क्रोधभैरव की कृपा से रम्भादेवी उसे राजकुल में जन्म देती है ॥ ९ ॥

रात्रौ देवगृहं गत्वा चन्दनेन च मण्डलम् ।
कृत्वा धूपं ततो दत्त्वायुतं मासं जपेन्मनुम् ।
मासान्ते महतीं पूजां कृत्वा रात्रौ जपश्चरेत् ।

निशात्यये समायाति प्रदद्यात् कुसुमासनम् ।
कृते च स्वागते प्रश्ने किमिच्छसि च वक्ति सा ।
साधकः प्राह भार्या त्वं भव यच्छ रसायनम् ।
पाति वर्षसहस्राणि अप्सराः स्वयमुर्वशी ।
परस्त्रीं वर्जयेत् सर्वामन्यथा म्रियते ध्रुवम् ॥ १० ॥

रात में देवालय में चन्दन का मण्डल बनाकर वहाँ धूप दें और उर्वशी का मन्त्र १०००० बार जपे। एक माह इसी प्रकार जप करके मास के अन्त में विस्तृत पूजा करके रात्रि में जप करे। रात्रिपर्यन्त जप करने पर रात्रि के शेष भाग में देवी आती हैं। उन्हें तत्काल पुष्पासन देना चाहिए। देवी सन्तुष्ट होकर साधक का मंगल पूछकर उससे वर माँगने को कहती हैं। तब साधक कहे—हे देवी ! तुम मेरी भार्या बनकर विविध रस एवं विशिष्ट भोज्य पदार्थ मुझे अर्पित करो। मन्त्रसिद्धि होने पर उर्वशी अप्सरा साधक का एक हजार वर्ष पर्यन्त पालन करती हैं। इस देवता के सिद्ध होने पर साधक को अन्य सभी स्त्रियों का त्याग करना होगा, उसकी अन्यथा मृत्यु हो जायेगी ॥ १० ॥

एकाकी शयने स्थित्वा शुची रात्रौ च कुङ्कुमैः ।
लिखित्वा भूषणीं भूर्जे चन्दनेन तु धूपयेत् ।
जपेदष्टसहस्रन्तु मासं यावत् प्रयत्नतः ।
मासान्ते तु समभ्यर्च्य जपेदष्टसहस्रकम् ।
रात्र्यर्द्धेऽन्तिकमायाति भार्या भवति कामिता ।
सिद्धिद्रव्यं हिरण्यश्च तुष्टा यच्छति भूषणम् ॥ ११ ॥

पवित्र होकर रात में एकाकी शय्या पर बैठकर भोजपत्र पर कुंकुम से भूषणी भूतिनी की प्रतिमूर्त्ति अंकित करके चन्दन से धूपित करे और भूषणी का मन्त्र ८००० जपे। एक माह तक प्रतिदिन जप करे और मासान्त में देवी की अर्चना करके पुनः ८००० मन्त्र जपे। इससे आधी रात्रि के समय देवी आकर साधक की पत्नी बन जाती हैं और साधक से सन्तुष्ट होकर मनोवांछित वर तथा स्वर्ण के आभूषण प्रदान करती हैं ॥ ११ ॥

क्रोधराजः पुनः प्राह यदि नायाति साधिता ।
अनेन क्रोधयोगेन जपेदप्सरसां मनुम् ।
विषं प्राथमिकं बीजमुद्धरेत् च कटुद्वयम् ।
अमुकं क्रोधबीजञ्च रतिमादरसंयुतम् ।
जपेदस्त्रं समुद्धृत्य मन्त्रमष्टसहस्रकम् ।
म्रियते शीर्यते मूर्ध्नि प्रस्फुटत्यप्सरेति च ।
बन्धयेदप्सरो वृन्दं मन्त्रेणानेन साधकः ।

विषं बन्धद्वयं प्रोच्य हनयुग्ममुदीरयेत् ।
अमुकीं क्रोधमन्त्राढ्यमप्सरो बन्धको मनुः ।। १२ ।।

क्रोधराज पुनः कहते हैं—यदि उक्त साधना से भी देवीगण न आयें तो 'ॐ कटु कटु अमुकी हुं फट्' का ८००० जप करे । अमुकी के स्थान पर देवी के नाम का प्रयोग करे । इससे भी यदि उक्त देवी न आयें तब तत्क्षण उनका मस्तक फूट जाता है और उन्हें मृत्यु मिलती है । तदनन्तर 'ॐ बन्ध बन्ध हन हन अमुकीं हुं' मन्त्र से अप्सराओं का बन्धन करे ।। १२ ।।

अथ वक्ष्येऽप्सरोवश्यकारकं मनुमुत्तमम् ।
विषं चलद्वयं प्रोच्य ह्यमुकीं वशमानय ।
सकूर्चास्त्रं जपेदेवाप्सरो वश्यमियात् पुनः ।। १३ ।।

इस प्रकार अप्सराओं को वशीभूत करने का मन्त्र कहा जा रहा है—'ॐ चल चल अमुकीं वशमानय हुं फट्' का जप करने से अप्सरागण वशीभूत हो जाती हैं ।। १३ ।।

अथातः क्रोधभूपेन मर्त्यानामुपकारकम् ।
यदुक्तं तदहं वक्ष्ये ह्यष्टाप्सरससाधनम् ।
अनेनैव विधानेन मुद्रामन्त्रप्रभावतः ।
जननी भगिनी भार्या चेटी भवति भूतिनी ।। १४ ।।

तदनन्तर क्रोधभूपति ने मनुष्यों के हितार्थ जो अष्ट अप्सरा-साधन का विधान कहा था, उसे कहा जा रहा है । इस विधान में मुद्राबन्धनादि करके साधना करने पर अप्सराएँ माता, बहन, पत्नी अथवा दासी होकर वशीभूत हो जाती हैं ।। १४ ।।

अन्योऽन्यमुष्टियोगेन पद्मावर्त्तौ करावुभौ ।
मध्याङ्गुल्यौ शुचीकृत्य मुद्रा दुःखविनाशिनी ।। १५ ।।

दोनों हाथों का मुद्राबन्धन कमलपुष्प के समान कर के दोनों मध्यमा अंगुलियों को शुचि (हवन करने का काष्ठनिर्मित पात्र) के आकार में रखे । इससे दुःख का विनाश होता है ।। १५ ।।

उभौ खड्गाकृतीकृत्य पाण्यप्सरोवशङ्करी ।
सान्निध्यकारिणी मुद्रा सर्वाप्सरःप्रसाधिनी ।
मुद्राबन्धनमात्रेण वशीभवति तत्क्षणात् ।
पद्मावर्त्ताविभौ हस्तौ कृत्वाप्सरःप्रसाधिनी ।। १६ ।।

दोनों हाथों को खड्गाकृति करे । यह है सान्निध्यकारिणी मुद्रा । इस मुद्रा द्वारा सभी अप्सराएँ तत्क्षण वश में हो जाती हैं । दोनों हाथों को पद्मावृत (कमलपुष्प के समान) करने से अप्सरा-साधन मुद्रा होती है ।। १६ ।।

वक्ष्याम्याह्वानमन्त्रन्तु यथा क्रोधेन भाषितम् ।
विषबीजं समुद्धृत्य सर्वाप्सर:पदन्तत: ।
आगच्छ द्वयमाभाष्य कूर्चद्वयमत: परम् ।
तारमादरसंयुक्तं विद्यादाह्वानपूर्वकम् ॥ १७ ॥

अब क्रोधराज द्वारा कहे गये आह्वान मन्त्र को कहा जाता है। 'ॐ सर्वाप्सर: आगच्छ हुं हुं ॐ फट्' इस मन्त्र से आह्वान करने पर तत्क्षण अप्सरागण का साक्षात्कार हो जाता है ॥ १७ ॥

तारं सर्वपदं सिद्धिपदाद् योगेश्वरीपदम् ।
कूर्चादस्त्रं समुद्धृत्याप्सर:सान्निध्यकारकम् ।
विषं कामप्रिये चेति शिवोऽभिमुखकारकम् ।
विषं वां प्रां समुद्धृत्य क्रोधबीजद्वयं पुन: ।
वायु: कालान्वितो मन्त्र: सर्वासां मोहन: स्मृत: ॥ १८ ॥

इति भूतडामरमहातन्त्रे अप्सर:साधनं नाम दशमं पटलम् ।

'ॐ सर्वसिद्धियोगेश्वरि हुं फट्'। यह मन्त्र अप्सराओं का सान्निध्य देता है। 'ॐ क्लीं स्वाहा' मन्त्र से अप्सराओं को अभिमुख करते हैं। 'ॐ वां प्रां हुं हुं यं हौं'। इससे सभी अप्सराएँ मोहित हो जाती हैं ॥ १८ ॥

भूतडामर महातन्त्र का दशम पटल समाप्त ।

एकादशं पटलम्

श्रीउन्मत्तभैरव्युवाच

समस्तदुष्टशमन ! सुरासुरनमस्कृत !।
सन्तुष्टो यदि देवेश ! यक्षिणीसाधनं वद ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—दुष्टों का नाश करने वाले तथा सुरासुरों द्वारा नमस्कार किये गये—हे देवेश ! यदि आप मेरे ऊपर प्रसन्न हैं, तो यक्षिणी-साधन की विधि को कहिए ॥ १ ॥

श्रीउन्मत्तभैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि यक्षिणीसिद्धिसाधनम् ।
क्रोधाधिपं नमस्कृत्योत्पत्तिस्थितिलयात्मकम् ।
यक्षिण्योऽष्टौ समाख्याता यास्तासां सिद्धिसाधनम् ।
मनुं तमपि वक्ष्याभि वाञ्छितार्थप्रदायकम् ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—हे देवी ! मैं सृष्टि-स्थिति-प्रलय करने वाले क्रोधपति को नमस्कार करके यक्षिणी-साधन कहता हूँ। ये आठ प्रकार की होती हैं। इनका सिद्धिसाधन मन्त्र सुनो। इस विधि से यक्षिणी-साधन करने पर वांछित फल मिलता है ॥ २ ॥

आदिबीजं समुद्धृत्य ह्यागच्छ सुरसुन्दरि !।
शक्तिबीजं शिवे ! युक्तमुद्धरेद्वह्निसुन्दरीम् ।
ॐ सर्वमनोहारिणीपदस्थितिं समुद्धरेत् ।
आदिबीजं शिवे युक्तः सर्वमनोहरो मनुः ।
ब्रह्मबीजं समुद्धृत्य ततः कनकवत्यपि ।
मैथुनप्रियेत्याभाष्य रौद्राद्वह्निवधूस्ततः ।
ख्याता कनकवत्येषा सर्वसिद्धिप्रदायिनी ।
विषं मे मातरागच्छ कामेश्वर्यनलप्रिया ।
कामेश्वरीमनुरसौ वाञ्छितार्थप्रदायकः ।
विषं भूतेश्वरीबीजं क्षतजार्णमतः परम् ।
रौरवं रतिसंयुक्तं प्रिये ज्वलनवल्लभा ।
रतिप्रियामनुः प्रोक्तो वाञ्छितार्थप्रदायकः ।
विषं प्राथमिकं बीजं पद्मिनीज्वलनप्रिया ।
अभीष्टार्थप्रदो नृणामित्युक्तः पद्मिनीमनुः ।

आदिबीजाच्च भूतेशीं नटीतोऽपि महानटीम् ।
स्वर्णाद्रूपवतीं पश्चात् शिवोऽन्तोऽसौ नटीमनुः ।
अनादिरद्रिजाबीजमुच्चरेदनुरागिणीम् ।
मैथुनप्रियेत्याभाष्य द्विठान्तोक्तानुरागिणी ॥ ३ ॥

सुरसुन्दरी का मन्त्र—ॐ आगच्छ सुरसुन्दरि ह्री हौं स्वाहा ।
मनोहारिणी का मन्त्र—ॐ सर्वमनोहारिणी ॐ हौं ।
कनकवती का मन्त्र—ॐ कनकवति मैथुनप्रिये हौं स्वाहा ।
कामेश्वरी का मन्त्र—ॐ मातरागच्छ कामेश्वरि स्वाहा ।
रतिप्रिया का मन्त्र—ॐ ह्रीं रतिप्रिये स्वाहा ।
पद्मिनी का मन्त्र—ॐ पद्मिनि स्वाहा ।
महानटी का मन्त्र—ॐ ह्रीं नटि महानटि स्वर्गरूपवति हौं ।
अनुरागिणी मैथुनप्रिया का मन्त्र—ॐ अनुरागिणि मैथुनप्रिये स्वाहा ।
ये मन्त्र अभीष्ट सिद्धि देते हैं ॥ ३ ॥

अथासां साधनं वक्ष्य एकैकं क्रोधभाषितम् ।
वज्रपाणिगृहं गत्वा दत्त्वा धूपञ्च गुग्गुलुम् ।
जपेत् त्रिसन्ध्यं मासान्ते ह्यायाति सुरसुन्दरी ।
जननी भगिनी भार्या स्वेच्छया कामिता भवेत् ।
राज्यं दीनारलक्षञ्च रसञ्चापि रसायनम् ।
माता भूत्वा महायक्षी मातृवत् परिपालयेत् ।
यदि स्याद्भगिनी दिव्यां कन्यामानीय यच्छति ।
रसं रसायनं सिद्धद्रव्यं भार्या भवेद् यदि ।
सर्वाशाः पूरयत्येवं महाधनपतिर्भवेत् ॥ ४ ॥

इस प्रकार आठ यक्षिणियों की साधन-पद्धति को यहाँ क्रोधराज के उपदेशानुसार अलग-अलग कहा जा रहा है । वज्रपाणि के मन्दिर में जाकर गुग्गुलु की धूप से प्रतिदिन तीनों सन्ध्याओं में पूर्वोक्त सुरसुन्दरी का मन्त्र जपे । इस प्रकार एक माह जप करने पर मासान्त में देवी आकर साधक की भावना के अनुरूप जननी, बहन, पत्नी बन जाती हैं । यक्षिणी के आगमन पर यदि साधक उन्हें मातृभाव से सम्बोधित करता है, तब वे नाना रसायन द्रव्य देकर मातृवत् पालन करती हैं । भगिनी का भाव रखने से वे दिव्य कन्या, नाना रसायन द्रव्य लाकर देती हैं । भार्या का भाव रखने से साधक की समस्त आशाएँ पूर्ण करके उसे महाधनाधीश बना देती हैं ॥ ४ ॥

गत्वा सरित्तटं कृत्वा चन्दनेन च मण्डलम् ।
पूजां विधाय महतीं दत्त्वा धूपञ्च गुग्गुलुम् ।

आसप्तदिवसं मन्त्रं जपेदयुतसङ्ख्यकम् ।
सप्तमे दिवसे रात्रौ कृत्वा पूजां मनोरमाम् ।
प्रजपेदर्धरात्रे तु शीघ्रमायाति यक्षिणी ।
साधकं किं करोमीति वदेच्चेत्याह साधकः ।
शताष्टपरिवाराढ्या वाञ्छितार्थंश्च यच्छति ।
शतमेकञ्च दीनारं सावशेषं व्ययेद्बुधः ।
तद्व्ययाभावतो भूयो न ददाति प्रकुप्यति ।
न ददाति न चायाति म्रियते सा मनोहरी ।। ५ ।।

नदीतट पर चन्दन का मण्डल बनाकर महापूजा करे । गुग्गुलु द्वारा धूपित करके पूर्वकथित मनोहारिणी का मन्त्र १०००० जपे । इस प्रकार सात दिन पूजन एवं जप करके सातवें दिन रात्रि में महती पूजा करके मन्त्र का जप करना प्रारम्भ करे । अर्धरात्रि के समय मनोहारिणी यक्षिणी आकर साधक से उसकी इच्छा पूछती हैं । तब साधक कहे—तुम मेरी चेटिका हो जाओ । यक्षिणी वशीभूता होकर अपने १०८ परिवार-जनों के साथ साधक का कार्य करती है और वांछित वस्तु, १०१ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं । साधक इन सब को उसी दिन व्यय कर दे । व्यय न करने से देवी क्रोधित होकर पुनः द्रव्यादि नहीं देतीं । साथ ही साधक को फिर दर्शन भी नहीं देती । यदि साधक के सम्मुख (मन्त्रजप) करने पर भी देवी मनोहारिणी नहीं आती तब उनकी मृत्यु निश्चित है ।। ५ ।।

वटवृक्षतलं गत्वा मत्स्यमांसादिदापयेत् ।
उच्छिष्टेन स्वयं रात्रौ सहस्रं सप्तवासरान् ।
प्रजपेत् सप्तमेऽह्न्यर्धरात्रेऽभ्यर्च्य सुगन्धिभिः ।
सर्वालङ्कारसंयुक्ता सर्वावयवसुन्दरी ।
शताष्टपरिवाराढ्या ध्याताऽऽगच्छति सन्निधिम् ।
अन्वहं द्वादशानाञ्च वस्त्रालङ्कारभोजनम् ।
दीनाराणि ददात्यष्टौ भार्या भवति कामिता ।
देवी कनकवत्येषा सिद्ध्यत्येवं न चान्यथा ।। ६ ।।

वटवृक्ष के नीचे मत्स्य-मांसादि निवेदन करके उस बचे हुए भोज्य द्रव्यों का (आहार करके) सात दिन तक प्रतिदिन रात्रि में १००० मन्त्र जपे । सातवें दिन आधी रात्रि में सुगन्ध-युक्त द्रव्यों से देवी की अर्चना करे । इससे प्रसन्न होकर सुन्दरी कनकवती समस्त अलंकारों से विभूषित होकर १०८ परिवार-जनों के साथ आती हैं और साधक को १२ प्रकार के वस्त्र, अलंकार, भोज्य द्रव्य तथा ८ स्वर्णमुद्राएँ देकर उसकी पत्नी बन जाती हैं । इस प्रकार की आराधना से देवी कनकवती सिद्ध हो जाती हैं । यह अन्यथा नहीं होता ।। ६ ।।

गोरोचनेन प्रतिमां भूर्जपत्रे विधाय च।
शय्यामारुह्य एकाकी सहस्रं प्रजपेन्मनुम्।
मासान्ते महतीं पूजां कृत्वा रात्रौ पुनर्जपेत्।
ततोऽर्धरात्रे आयाति भार्या भवति कामिता।
दिव्यालङ्करणं त्यक्त्वा शयने प्रत्यहं व्रजेत्।
परस्त्रीगमनत्यागोऽन्यथा मृत्युरदूरतः।
इयं कामेश्वरीदेवी वाञ्छितार्थप्रदायिनी।
चिन्तयेत्तां स्वर्णवर्णां दिव्यालङ्कारभूषिताम्।
सर्वाभीष्टप्रदां शक्तिं सर्वज्ञानाभयप्रदाम्।
जातीप्रभृतिभिः पुष्पैः समभ्यर्च्य धृतोत्पलाम्।
एवं प्रसाधिते मन्त्रे मन्त्रसिद्धिः प्रजायते॥ ७॥

भोजपत्र पर गोरोचन से यक्षिणी की प्रतिमा लिखकर रात्रि में एकाकी शय्या पर बैठकर कामेश्वरी यक्षिणी का मन्त्र १००० जपे। ऐसा एक माह तक करने पर मासान्त में देवी का पूजन करके रात्रि में पुनः मन्त्रजप प्रारम्भ करे। अर्धरात्रि में कामेश्वरी साधक की भार्या होकर आती हैं और साधक के साथ रात बिताकर सुबह शय्या पर दिव्य आभूषण छोड़कर चली जाती हैं। इनके सिद्ध होने पर अन्य स्त्री के साथ सहवास न करे, अन्यथा साधक मर जाता है। कामेश्वरी देवी वांछित धन देती हैं। कांचनवर्णा, दिव्य अलंकार से अलंकृता, सर्व अभीष्टदायिनी, सर्वज्ञा, अभयदात्री, शक्तिरूपा, उत्पलधारिणी, कामेश्वरी देवी की चमेली आदि के फूलों द्वारा पूजन तथा ध्यान करे। ऐसा करने से मन्त्र की सिद्धि प्राप्त होती है॥ ७॥

धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
आसप्तदिवसं सप्तदिवसान्ते च वैष्णवीम्।
पूजां विधाय यत्नेन घृतदीपं विधाय च।
प्रजपेदर्द्धरात्रेऽसौ समायाति रतिप्रिया।
कामिता सा भवेद्भार्या दिव्यं भोज्यं रसायनम्।
पञ्चविंशतिदीनारं वस्त्रालङ्करणानि च।
आशाश्च पूरयत्याशु सिद्धिद्रव्यं प्रयच्छति॥ ८॥

गुग्गुलु की धूप देकर पूर्वोक्त रतिप्रिया मन्त्र ८००० बार जपे। ७ दिन जप करने पर अन्तिम दिन जपान्त में देवी का पूजन करे। रात्रि में घृत-दीपक जलाकर पुनः मन्त्र जपे। इससे अर्द्धरात्रि के समय रतिप्रिया यक्षिणी आकर साधक की भार्या बन जाती है और दिव्य रसायन, भोजन द्रव्य, सोने की २५ मुद्राएँ, वस्त्र तथा आभूषण देकर समस्त आशाओं की पूर्त्ति करती हैं॥ ८॥

स्वगृहे वा शिवस्थाने मण्डलं चन्दनात्मकम् ।
कृत्वा गुग्गुलुधूपञ्च दत्त्वाभ्यर्च्य विधानतः ।
जपेदष्टसहस्रन्तु मासमेकं निरन्तरम् ।
पौर्णमास्यां समभ्यर्च्य यथाविभवतो निशि ।
प्रजपेदर्द्धरात्रे तु समागच्छति पद्मिनी ।
सर्वाशाः पूरयत्येषा भार्या भवति कामिता ।
रसं रसायनं द्रव्यं सिद्धिद्रव्यं प्रयच्छति ॥ ९ ॥

अपने घर में अथवा शिव-मन्दिर में चन्दन का मण्डल बनाकर गुग्गुलु से धूपदान करे। प्रतिदिन नियम से पद्मिनी की अर्चना करके एक माह तक पूर्वोक्त पद्मिनी मन्त्र का ८००० जप करे। पूर्णिमा को जप समाप्त होने पर अपने सामर्थ्य के अनुसार पूजन करके पुनः जप करे। अर्द्धरात्रि में पद्मिनी देवी आकर साधक की पत्नी बन जाती है और नाना प्रकार के रसायन द्रव्य देकर साधक की आशा पूर्ण करती हैं ॥ ९ ॥

अशोकवृक्षमागत्य मत्स्यमांसं प्रदापयेत् ।
धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
मासान्ते महतीं पूजां कृत्वा प्राग्वज्जपेन्निशि ।
अर्द्धरात्रे समायाति जननी भगिनी वधूः ।
स्वेच्छया जननी भूत्वा भोज्यं यच्छति वाससी ।
भगिनी चेत्तदा काम्यं भोज्यालङ्करणादिकम् ।
सहस्रयोजनाद्दिव्यां स्त्रियमानीय यच्छति ।
भार्या चेत् पूरयत्याशा रसञ्चैव रसायनम् ।
दीनाराणि ददात्यष्टौ प्रत्यहं परितोषिता ॥ १० ॥

अशोक वृक्ष के नीचे आकर मछली का मांस निवेदन करके गुग्गुलु द्वारा धूपित करे और महानटी यक्षिणी का जप ८००० बार नित्य एक माह पर्यन्त करे। मासान्त में जप समाप्त होने पर पूजन करके रात्रि में पुनः जप प्रारम्भ करे। अर्द्धरात्रि में यक्षिणी आती हैं। यदि साधक उन्हें माता मानता है, तब वे भोज्य द्रव्य तथा वस्त्र देती हैं। भगिनी मानने पर वांछित भोजन तथा अलंकार प्रदान करती हैं और हजारों योजन दूर होने पर भी वहाँ से दिव्य स्त्री लाकर देती हैं। पत्नी बनने की स्थिति में वे समस्त आशाओं की पूर्ति, नाना रसायन द्रव्य तथा प्रतिदिन ८ स्वर्णमुद्रा देती हैं ॥ १० ॥

कुङ्कुमेन समालिख्य यक्षिणीं भूर्जपत्रके ।
प्रतिपत्तिथिमारभ्य प्रत्यहं परिपूजयेत् ।
धूपाद्यैः प्रजपेदष्टसहस्रमनुरागिणीम् ।

पौर्णमास्यां पुनारात्रौ घृतदीपं प्रकल्पयेत् ।
पूजयेद्गन्धपुष्पाद्यैः सकलां प्रजपेन्निशाम् ।
प्रभातेऽसौ समायाति भार्या भवति कामिता ।
मुद्रासहस्रं भोज्यञ्च रसञ्चापि रसायनम् ।
प्रयच्छति च वस्त्राणि जीवेद्वर्षसहस्रकम् ।
यदि कालमतिक्रामेन्नागच्छति न सिध्यति ।
विषं क्रोधास्त्रयुक् प्रोच्यामुकी यक्षिण्यतःपरम् ।
भूतेशीं सादरं युग्मं द्वयं क्रोधास्त्रसंयुतम् ।
क्रोधेनानेन चाक्रम्य जपेदष्टसहस्रकम् ।
तथा कृते समायाति वाञ्छितार्थं प्रयच्छति ।
यदि नायाति म्रियते अक्षिण मूर्ध्नि स्फुटत्यपि ।
रौरवे नरके घोरे पातयेत् क्रोधभूपतिः ॥ ११ ॥

भोजपत्र पर कुंकुम से यक्षिणी की प्रतिमूर्त्ति बनायें। प्रतिपदा से प्रारम्भ करके प्रतिदिन तीनों सन्ध्या को धूप, दीप आदि उपचारों से पूजा करे तथा रात्रि में ८००० अनुरागिणी मैथुनप्रिया के मन्त्र को जपे। प्रतिदिन यह पूजन जप करते हुए पूर्णिमा की रात्रि में घी का दीपक जलाये और गन्ध, पुष्प, धूप तथा नैवेद्य आदि उपकरणों द्वारा पूजन करके पुनः रात्रि में जप करना प्रारम्भ करे। इससे प्रभात के समय देवी आती हैं और साधक की पत्नी बनकर उसकी इच्छाएँ पूर्ण करती हैं। वे साधक को १००० मुद्रा, नाना प्रकार के भोजन, द्रव्य तथा वस्त्र आदि देती हैं। इस देवता की सिद्धि से साधक १००० वर्ष जीवित रहता है। यदि उक्त साधना द्वारा देवी न आयें तब समय बीत जाने पर 'ॐ हुं फट् फट् अनुरागिणी यक्षिणी ह्रीं षं षं हुं हुं फट्' इस क्रोधमन्त्र का ८००० जप करे। इससे भी यदि यक्षिणी नहीं आती है, तब उसके मस्तक तथा नेत्र फूट जाते हैं, उसकी मृत्यु होती है एवं क्रोधभूपति उसे घोरतर नरक में छोड़ते हैं ॥ ११ ॥

मुष्टिमन्योऽन्यमास्थाय कनिष्ठे वेष्टयेदुभे ।
प्रसार्याकुञ्च्य तर्जन्यौ कार्यौ तावङ्कुशाकृती ।
इयं क्रोधाङ्कुशी मुद्रा त्रैलोक्याकर्षणक्षमा ॥ १२ ॥

अब यक्षिणीमुद्रा कहते हैं। दोनों हाथ की मुट्ठियाँ बाँधकर दोनों कनिष्ठा उँगलियों को एक-दूसरे से लपेटे। तदनन्तर दोनों तर्जनियों को फैलाकर अंकुश की आकृति में लाये। यह है क्रोधांकुशी मुद्रा, जिससे त्रिभुवन का आकर्षण हो सकता है ॥ १२ ॥

पाणी समौ विधायाथ व्यत्ययान्मध्यमाद्वयम् ।
कृत्वा तिर्यगनामान्ते बाह्यतः स्थापयेद्बुधः ।

तर्जन्याभिनिविष्टेन　　कनिष्ठागर्भसंस्थिता ।
ज्येष्ठाङ्गुष्ठेनावाहयेद् मुद्रया यक्षिणीं शुभाम् ॥ १३ ॥

यक्षिणी की अन्य मुद्रा यह है । दोनों हथेलियों को समान करके मध्यमाद्वय को तिर्यक्रूपेण अनामिका के बाहर स्थापित करे । तदनन्तर दोनों तर्जनियों द्वारा कनिष्ठा उँगलियों को हाथ के भीतर रखकर वृद्धांगुलि द्वारा यक्षिणी का आवाहन करे ॥ १३ ॥

विषबीजं समुद्धृत्य बीजं प्राथमिकं ततः ।
आभाष्य तामसीं गच्छ संयुक्तां हि समुद्धरेत् ।
यक्षिणाग्निप्रियान्तोऽयं यक्षिण्याह्वानकृन्मनुः ।
आह्वानमुद्रया वामाङ्गुष्ठेनापि विसर्जयेत् ।
यक्षिणीमनुनानेन वक्ष्यमाणेन पूजिता ।
प्रालेयं रौद्रीयं बीज गच्छद्वयसमन्वितम् ।
अमुकयक्षिण्युद्धृत्य पुनरागमनाय च ।
द्विठान्तमुद्धरेन्मन्त्रं यक्षिणीनां विसर्जयेत् ॥ १४ ॥

'ॐ ह्रीं आगच्छागच्छ अमुक यक्षिणि स्वाहा' इस मन्त्र से यक्षिणी का आवाहन करे । आवाहन मुद्रा द्वारा किंवा बायें अँगूठे द्वारा 'ॐ ह्रीं गच्छ गच्छ अमुकयक्षिणि पुनरागमनाय स्वाहा' इस मन्त्र से यक्षिणियों का विसर्जन करे ॥ १४ ॥

कृत्वान्योऽन्यमुभे मुष्टी प्रसार्य मध्यमाद्वयम् ।
सम्मुखीकरणी मुद्रा यक्षिणीनां प्रदर्शयेत् ।
विषं महायक्षिणीति ह्युद्धरेन्मैथुनप्रिये ।
वह्निजायां तथोक्तोऽयं सम्मुखीकरणो मनुः ॥ १५ ॥

दोनों हाथों से मुट्ठी बांधकर मध्यमा उँगलियों को फैलायें । यह है सम्मुखीकरणी मुद्रा । यक्षिणी का आवाहन करके इस मुद्रा का प्रदर्शन करे । 'ॐ महायक्षिणि मैथुनप्रिये स्वाहा' । यह सम्मुखीकरण का मन्त्र है ॥ १५ ॥

अन्योऽन्यमुष्टिमास्थाय　　प्रसार्याकुञ्चयेदुभे ।
कनिष्ठे चापि मुद्रेयं सान्निध्यकारिणी स्मृता ।
विषं कामपदाद् भोगेश्वरी स्वाहेति संयुता ॥ १६ ॥

एक साथ दोनों हाथों की मुट्ठी बन्द करके दोनों कनिष्ठाओं को फैलाकर फिर सिकोड़े । यह सान्निध्यकारिणी मुद्रा है । इसका मन्त्र है—'ॐ कामभोगेश्वरि स्वाहा' । यह मन्त्र सान्निध्यकरण के लिए प्रयुक्त होता है ॥ १६ ॥

कृत्वा मुष्टिं ततोऽन्योऽन्यं साधकानां हृदि न्यसेत् ।

वक्ष्यमाणेन मनुना मुद्रास्थापनकर्मणि ।
विषं समं समुद्धृत्य त्रैलोक्यग्रसनात्मकम् ।
संयुक्तं धूम्रभैरव्या नादबिन्दुसमन्वितम् ।
हृदयाय शिरोऽन्तोऽयं हृदि संस्थापयेन्मनुम् ॥ १७ ॥

दोनों हाथों की एक साथ मुट्ठी बाँधकर 'ॐ ह्रीं हृदयाय नमः' मन्त्र से दोनों मुट्ठियों को वक्षःस्थल पर रखें । यह यक्षिणी का मन्त्र है तथा यह मुद्रा त्रिभुवन को निगल सकती है ॥ १७ ॥

कृत्वा मुष्टिं ततोऽन्योऽन्यं तर्जनीमपि मध्यमाम् ।
प्रसार्य प्रमुखी वेद्या मुद्रा मन्त्रसमन्विता ।
ॐ सर्वमनोहारिणी द्विठान्तश्च समुद्धरेत् ।
पञ्चोपचारमुद्राया मनुरेष उदाहृतः ॥ १८ ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रे यक्षिणीसाधनं नाम एकादशं पटलम् ।

दोनों हाथों की मुट्ठी बाँधकर तर्जनी तथा मध्यमाङ्गुली को फैलाये । यह है प्रमुखी मुद्रा । इस मुद्रा द्वारा 'ॐ सर्वमनोहारिणि स्वाहा' मन्त्र से गन्ध-पुष्प-धूप-नैवेद्यादि पंचोपचार से यक्षिणी का पूजन करे ॥ १८ ॥

भूतडामर महातन्त्र का एकादश पटल समाप्त ।

द्वादशं पटलम्

उन्मत्तभैरव्युवाच

सुरासुरजगत्त्राणदायक ! प्रमथाधिप ! ।
कालवज्र ! वद त्वं मे नागिनीसिद्धिसाधनम् ।। १ ।।

उन्मत्तभैरवी पूछती हैं—हे प्रमथेश्वर ! आप सुर-असुर, सबकी रक्षा करते हैं । कृपया नागिनी-सिद्धि के उपाय का उपदेश करें ।। १ ।।

उन्मत्तभैरव उवाच

अथाष्टनागराजानां सिद्धिसाधनमुच्यते ।
परिषन्मण्डलं नत्वा क्रोधराजं सुरेश्वरम् ।
मनुमासां प्रवक्ष्यामि यथा क्रोधेन भाषितम् ।। २ ।।

उन्मत्तभैरव कहते हैं—मैं सुरेश्वर क्रोधराज को प्रणाम करके नागिनी-साधन तथा क्रोधराज द्वारा कहा गया नागिनी-मन्त्र कहता हूँ ।। २ ।।

पञ्चरश्मेः पूर्मनुना प्रोक्तोऽनन्तमुखीमनुः ।
विषबीजात् पूः कर्कोटमुखीप्रोक्तो महामनुः ।
प्रालेयात् पद्मिनीपूः स्यात् पद्मिनीमनुरीरितः ।
प्रालेयात् कालजिह्वापूश्चतुर्थो मनुरीरितः ।
विषान्महापद्मिनी पूरुक्तेयं पद्मिनी पुरा ।
प्रालेयाद्वासुकी प्रोक्ता मुखी पूर्वमुखी मुखी ।
तारात् कूर्चद्वयाद् भूपमुखी पूर्वपरो मनुः ।
प्रालेयात् शङ्खिनीं गृह्य ततो वायुमुखी पदम् ।
कूर्चद्वयान्तमुद्धृत्य शङ्खिनीमनुरीरितः ।। ३ ।।

अब अष्ट नागिनियों के आठ प्रकार के मन्त्र कहे जाते हैं ।
अनन्तमुखी नागिनी मन्त्र—ॐ पूः अनन्तमुखी स्वाहा ।
कर्कोटमुखी नागिनी मन्त्र—ॐ पूः कर्कोटमुखी स्वाहा ।
पद्मिनीमुखी नागिनी मन्त्र—ॐ पूः पद्मिनीमुखी स्वाहा ।
तक्षकमुखी नागिनी मन्त्र—ॐ कालजिह्वा पूः स्वाहा ।
महापद्ममुखी नागिनी मन्त्र—ॐ महापद्मिनी स्वाहा ।
वासुकीमुखी नागिनी मन्त्र—ॐ वासुकीमुखी स्वाहा ।
कुलीरमुखी नागिनी मन्त्र—ॐ हुं हुं पूर्वभूपमुखी स्वाहा ।
शंखिनी नागिनी मन्त्र—ॐ शङ्खिनी वायुमुखी हुं हुं ।

गत्वा तु नागभुवनं लक्षमेकं जपेन्मनुम् ।
तुष्टा भवन्ति नागिन्यो ह्यनया पूर्वसेवया ॥ ४ ॥

नागलोक (नाग के बिल के पास) पूर्वोक्त नागिनी मन्त्रों का एक लाख जप करे। इससे अष्टनागिनियाँ प्रसन्न होती हैं ॥ ४ ॥

गत्वा नागभुवं शुक्लपञ्चम्यां दापयेद्बलिम् ।
यथोक्तगन्धपुष्पाद्यैः पूजयित्वा जपश्चरेत् ।
सहस्रं शीघ्रमायाति नागकन्यान्तिकं स्वयम् ।
क्षीरेणार्घ्यं निवेद्याथ वक्तव्यं स्वागतं पुनः ।
कामिता सा भवेद्भार्या चाष्टौ मुद्राः प्रयच्छति ॥ ५ ॥

नागलोक में जाकर शुक्लपक्ष की पंचमी को बलिदान दे। तदनन्तर गन्धपुष्पादि से पूजा करके जप करे। जपान्त में सहस्र नागकन्याएँ आती हैं। तब साधक दूध से अर्घ्य देकर स्वागत-वचन कहे। ऐसा साधन करके नागिनी भार्या होकर अभिलाषा पूर्ण करती हैं और वह साधक को प्रतिदिन आठ स्वर्णमुद्राएँ प्रदान करती हैं ॥ ५ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा क्षीराहारी जपश्चरेत् ।
सहस्रमन्वहं दिव्या नागिन्यायाति सन्निधिम् ।
चन्दनेन निवेद्यार्घ्यं भार्या भवति कामिता ।
दीनारमन्वहं पञ्च भोज्यं यच्छति कामिकम् ॥ ६ ॥

नदी के संगमस्थान पर क्षीर का भोजन करके नागिनी के मन्त्र का जप करे। ऐसा करने पर सहस्र नागकन्याएँ प्रतिदिन साधक के पास आती हैं। तब साधक चन्दन का अर्घ्य प्रदान करे। उससे नागकन्या साधक की भार्या बनकर उसे पाँच स्वर्ण की मुद्राएँ तथा नाना प्रकार के भोजन द्रव्य प्रतिदिन देती हैं ॥ ६ ॥

नागस्थाने निशि स्थित्वा जपेदष्टसहस्रकम् ।
नागिन्यायाति पूजान्ते शिरोरोगेण संयुता ।
किं करोमि वदेद्वत्स ! भव मातेति साधकः ।
वस्त्रालङ्करणं भोज्यं मानञ्चापि प्रयच्छति ।
तद्वत् पञ्च दीनाराणि व्ययितव्यानि शेषतः ।
तद्व्ययाभावतो भूयो न ददाति प्रकुप्यति ॥ ७ ॥

नागस्थान (बिल) के पास ८००० मन्त्र का जप करे। नागिनी शिर के रोग से पीड़ित होकर साधक के पास आती है और कार्य पूछती है। तब साधक कहते हैं कि तुम मेरी माता बनो। नागिनी सन्तुष्ट होकर वस्त्र-अलंकार, मनोवांछित भोजन, सम्मान तथा ५ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं। मुद्राओं को उसी दिन

खर्च कर देना चाहिए। व्यय न करने से नागिनी क्रुद्ध हो जाती है और पुनः मुद्रा नहीं देती ॥ ७ ॥

रात्रौ सरोवरं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
नागिन्यायाति जपान्ते भार्या भवति कामिता।
यद्यद्ददाति द्रव्याणि व्ययं कुर्यादशेषतः।
व्ययाभावेन सा क्रुद्धा न ददाति प्रकुप्यति ॥ ८ ॥

रात में सरोवर के पास जाकर ८००० जप करे। जपान्त में नागिनी आकर साधक की भार्या बन जाती है और वांछित द्रव्य प्रदान करती है। साधक को प्रतिदिन द्रव्य खर्च कर देना चाहिए, अन्यथा नागिनी कुपित हो जाती है और फिर धन नहीं देती ॥ ८ ॥

नीचगासङ्गमं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
नागकन्या समायाति जपान्ते साधकान्तिकम्।
सूर्यवर्णासनं दत्त्वा वक्तव्यं स्वागतं पुनः।
भार्या भूत्वाऽन्वहं स्वर्णं ददाति च शतं पलम् ॥ ९ ॥

नदीसंगम पर बैठकर ८००० मन्त्र जप करे। जपान्त में नागकन्याएँ साधक के पास आती हैं। तत्काल उन्हें सूर्यवर्ण के समान आसन दे। साथ ही कुशलक्षेम पूछे। इससे नागिनी साधक की पत्नी होकर प्रतिदिन १०० पल (४०० तोला) स्वर्ण देती हैं ॥ ९ ॥

रात्रौ सरोवरं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
जपान्तेऽन्तिकमायाति नागकन्या मनोहरा।
अन्वहं भगिनी भूत्वा दीनारं वाससी पुनः।
तुष्टा यच्छति यामिन्यां साधकायोरगात्मजा ॥ १० ॥

रात में सरोवर के पास बैठकर ८००० जप करे। जपान्त में मनोहरा नागकन्या साधक के पास आकर बहन बन जाती है और प्रतिदिन स्वर्णमुद्रा एवं वस्त्रद्वय देती है। साधक से सन्तुष्ट होकर रात्रि को उसकी इच्छा पूर्ण करती है ॥ १० ॥

गत्वा नागभुवं नाभिजलादुत्तीर्य साधकः।
जपेदष्टसहस्रन्तु जपान्ते नागकन्यका।
स्वयमन्तिकमायाति सपुष्पं मूर्ध्नि दापयेत्।
दीनाराणि ददात्यष्टौ भार्या भवति कामिता।
कामिकं भोजनं द्रव्यमन्वह सा प्रयच्छति ॥ ११ ॥

नागस्थान पर स्थित सरोवर में नाभिपर्यन्त जल में खड़े होकर नागिनी-मन्त्र का ८००० जप करे। जपान्त में नागकन्या के आने पर उनके मस्तक पर पुष्प

चढ़ाये। इससे नागकन्या साधक की पत्नी बनकर ८ स्वर्णमुद्राएँ तथा वांछित भोजन देती है ॥ ११ ॥

रात्रौ नागभुवं गत्वा जपेदष्टसहस्रकम्।
भूयश्च सकलां रात्रिं जपेत् प्रयतमानसः।
साधकान्तिकमायाति सर्वालङ्कारभूषिता।
पुष्पचन्दनतोयार्घ्यं दत्त्वा स्वागतमाचरेत्।
कामिता सा भवेद् भार्या सिद्धिद्रव्यं प्रयच्छति।
रसं रसायनं राज्यं भोज्यं यच्छति नित्यशः ॥ १२ ॥

रात्रि के समय नागस्थान में जाकर पूर्वोक्त नागिनी-मन्त्र का ८००० जप करे। तदनन्तर पुनः संयमचित्त होकर रात्रि में जप प्रारम्भ करे। जपान्त में नागिनी समस्त अलंकार से भूषित होकर साधक के पास आती हैं। नागिनी साधक की भार्या होकर अभिलषित वस्तु, नाना रसपूर्ण भोजन, राज्य तथा धन आदि को प्रतिदिन देती हैं ॥ १२ ॥

गत्वा नागभुवं रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम्।
जपान्ते नागकन्या च याति साधकसन्निधिम्।
कामिता सा भवेद् भार्या सर्वाशाः पूरयत्यपि।
दीनारं कामिकं भोज्यं नित्यं यच्छति वाससी ॥ १३ ॥

साधक रात्रि में नागलोक (सर्पबिल के समीप) जाकर पूर्वोक्त नागिनी-मन्त्र का ८००० जप करे। जप का समापन होते ही नागकन्या साधक के निकट आती हैं और साधक की भार्या होकर उसकी समस्त आशा पूर्ण करती हैं और नित्य दिव्य वस्त्र, भोजन वस्तु तथा स्वर्णमुद्रा देती हैं ॥ १३ ॥

गत्वा नागान्तिकं रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम्।
जपान्ते नागकन्यासौ झटित्यायाति सन्निधिम्।
दद्याच्छिरसि पुष्पाणि भार्या भवति कामिता।
दिव्यवस्त्राण्यलङ्कारं भोजनादीनि यच्छति ॥ १४ ॥

साधक रात्रि में नाग के बिल के पास जाकर पूर्वोक्त नागिनी-मन्त्र को ८००० जपे। जप के अन्त में नागकन्या तत्काल आती है। तब साधक उसके मस्तक पर पुष्प चढ़ाये। नागकन्या उसकी पत्नी होकर उत्तम वस्त्र, अलंकार तथा भोजन द्रव्य देती है ॥ १४ ॥

नागिनीसिद्धिमन्त्राणि निरूप्यन्ते पुनर्यथा।
प्रालेयं तामसीं चण्डं रुद्रदंष्ट्राकपर्दिनम्।
विदार्यालिङ्गितं गृह्य नागिनीं च कपर्दिनम्।
विदारीमण्डितं प्राग्वन्नागिन्याह्वानकृन्मनुः।

तरणीपूर्मनुर्गन्धपुष्पादीनामुदीरिता ।
विषं पूः शारदा काली भैरवी चार्घ्यकर्मणि ।
तामसी पूः कूजनी पूः कूर्चपूर्नागिनी च पूः ।
सर्वनागाङ्गनानाञ्च समयस्य मनुः स्मृतः ।
कपर्दी तालजङ्घाढ्यस्तामसी गच्छ शीघ्रकम् ।
पुनरागमनायेति शिवोऽन्तो मनुरीरितः ॥ १५ ॥

पुनः नागिनी-साधन कहा जाता है—

आवाहन मन्त्र—ॐ द्रां हुं हुं नागिनी प्रीं द्रां ।
पुष्पगन्धदान मन्त्र—ॐ पूः तरणीमुखी स्वाहा ।
अर्घ्य मन्त्र—ॐ पूः शारदामुखी स्वाहा ।
ॐ पूः कालीमुखी स्वाहा ।
ॐ पूः भैरवीमुखी स्वाहा ।
समस्त नागकन्या-साधन मन्त्र—ॐ पूः तामसीमुखी स्वाहा ।
ॐ पूः कूजनीमुखी स्वाहा ।
ॐ पूः हुं नागिनी स्वाहा ।
'द्रां हुं द्रां शीघ्रं गच्छ पुनरागमनाय हौं' । यह विसर्जन मन्त्र है ।

उच्छ्रायाऽधोऽञ्जलीशृङ्गं तर्जनीमुखसङ्गताः ।
अङ्गुष्ठमुद्रिता मुद्रा नागिनीवशकारिणी ।
वामदक्षकरौ मुष्टी कनिष्ठानखमाक्रमेत् ।
अङ्गुष्ठेन प्रसार्यान्या नागिनीवशकारिणी ॥ १६ ॥

नागिनी-साधनमुद्रा—दोनों हाथों की अंजलि बनाकर सभी उंगलियों के अग्रभाग को ऊर्ध्वमुख करे और तर्जनीद्वय के अग्रभाग से अंगूठों के अग्रभाग को स्पर्श करे । इससे नागिनी वशीभूत हो जाती है । दूसरी मुद्रा इस प्रकार है—दोनों मुट्ठी बांधकर अंगूठों द्वारा दोनों कनिष्ठा उंगलियों के नख को छूते हुए अन्य सभी उंगलियों को फैलायें । इस मुद्रा से भी नागिनी वशीभूत होती हैं ॥ १६ ॥

तथापि समयं तिष्ठेन्नागत्य कुरुते वचः ।
अनेन क्रोधयोगेन जपेदष्टसहस्रकम् ।
प्रालेयं भीषणपदं वज्रप्राथमिकान्वितम् ।
उच्चार्यामुकनागिनीमाकर्षय समन्वितम् ।
क्रोधबीजद्वयञ्चास्त्रं नागिनीमारणात्मकम् ।
अस्मिन् भाषितमात्रे तु क्रोधवज्रेण मूर्धनि ।
शीर्यन्ते वा म्रियन्ते वा शिरोरोगेण मूर्च्छिता ।

अष्टौ पतन्ति नरके शुचौ वज्रानलाकुले ।
इत्याह नागिनीसिद्धिसाधनं क्रोधभूपतिः ॥ १७ ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रे-अष्टनागिनीसिद्धिसाधनं नाम द्वादशं पटलम् ।

यदि इस साधना या मुद्रा से नागिनियाँ वश में न हों, तब 'ॐ ह्लीं वज्रभीषणाम् अमुकनागिनीम् आकर्षय हुं हुं फट्' । (अमुक के स्थान पर वांछित नागिनी का नाम युक्त करें ।) इस मन्त्र का ८००० जप करे, इससे नागिनी के मस्तक पर क्रोधभूपति का वज्र गिरता है । वह शिरोरोग से मूर्च्छित अथवा शीर्ण होती हैं, किंवा तत्काल मृत्यु होकर वज्राग्नियुक्त नरक में अष्टनागिनियों सहित जा पड़ती है । यह क्रोधभूपति द्वारा कहा गया नागिनीसिद्धि-साधन है ॥ १७ ॥

भूतडामर महातन्त्र का बारहवाँ पटल समाप्त ।

त्रयोदशं पटलम्

श्रीमत्युन्मत्तभैरव्युवाच

भिन्नाञ्जनचयप्रख्य ! रवीन्द्वग्निविलोचन ! ।
करालवदन ! ब्रूहि किन्नरीसिद्धिसाधनम् ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—उन्मत्तभैरव ! आपके तीन नेत्रों में क्रमशः सूर्य, चन्द्र तथा अग्नि विराजित हैं। आपका मुख भीषण हैं और आपका शरीर फूटे हुए अंजन पर्वत के समान है। आप कृपया किन्नरी-साधन का उपदेश कीजिए ॥ १ ॥

श्रीमदुन्मत्तभैरव उवाच

गुह्यकाधिपतिं क्रोधराजोवाच महेश्वरः ।
किन्नरीः साधयिष्यामि मारयिष्यामि देवताः ।
त्रैधातुकं महाराज्यं दास्यामि त्वयि नान्यथा ।
अथातः सम्प्रवक्ष्यामि किन्नरीसिद्धिसाधनम् ।
येनानुष्ठितमात्रेण लभ्यन्ते सर्वसिद्धयः ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—क्रोधाधिपति महादेव ने गुह्यकों के राजा कुबेर को जिस किन्नरी-साधन का उपदेश दिया था वह अभी मैं तुमसे कहूँगा। इस किन्नरी-साधना से देवगण को भी नष्ट किया जा सकता है, त्रिभुवन का अधिपतित्व मिलता है और समस्त अभिलाषाएँ पूर्ण होती हैं ॥ २ ॥

मनुमासां प्रवक्ष्यामि क्रोधभूपप्रसादतः ।
हौमन्तान्मनोहारिणी शिवोऽन्तं मनुमुद्धरेत् ।
प्रालेयात् सुभगे वह्निप्रियान्तमपरो मनुः ।
विषाद्विशालऽनेत्रेऽग्निवल्लभान्तस्तृतीयकः ।
पञ्चरश्मिं समुद्धृत्य तदन्ते सुरतप्रिये ! ।
वह्निजायान्त उक्तोऽसौ चतुर्थः किन्नरीमनुः ।
विषबीजं समुद्धृत्य सुमुख्यग्रे द्विठो मनुः ।
सृष्टिर्दिवाकरमुखी शिवोऽन्तश्चापरो मनुः ॥ ३ ॥

क्रोधभूपति के प्रसाद से किन्नरी-साधना का मन्त्र कहा जाता है—

ॐ मनोहारिणि हौं ।

ॐ सुभगे स्वाहा स्वाहा ।

ॐ विशालनेत्रे स्वाहा ।

ॐ सुरतप्रिये स्वाहा ।
ॐ सुमुखि सुमुखि स्वाहा ।
ॐ दिवाकरमुखि स्वाहा ।
ये सब ६ किन्नरियों के मन्त्र हैं ॥ ३ ॥

अथ मनोहारिणीसाधनम्

शैलमूर्ध्नि समास्थाय जपेदष्टसहस्रकम् ।
जपान्ते महतीं पूजां गोमांसेन प्रकल्पयेत् ।
धूपञ्च गुग्गुलुं दत्त्वा यामिन्यां जपमाचरेत् ।
अर्धरात्रौ समायाति न भेतव्यं कदाचन ।
वदेत् किमाज्ञापयसि भव भार्येति साधकः ।
त्रिदिवं पृष्ठमारोप्य दर्शयत्यपि यच्छति ।
कामिकं भोजनं स्वर्गं सिद्धिद्रव्यं प्रयच्छति ॥ ४ ॥

अब मनोहारिणी-साधना कहते हैं—रात्रि में साधक पर्वत-शिखर पर 'ॐ मनोहारिणि ह्रौं' मन्त्र को ८००० बार जपे । जपान्त में गोमांस द्वारा महती पूजा करे । तदनन्तर गुग्गुलु से धूपित कर पुनः जप करे । आधी रात में किन्नरी उपस्थित होती हैं । उन्हें देखकर भयभीत नहीं होना चाहिए । उनके पूछने पर साधक कहे—'आप मेरी भार्या बनें' । वह साधक को पीठ पर बैठाकर स्वर्गलोक दिखलाती है एवं भोज्य तथा अभिलषित वस्तु देती हैं ॥ ४ ॥

अथ सुभगासाधनम्

पर्वते वा वने वापि विहारे वायुतं जपेत् ।
निराहारोऽपि जपान्ते दिव्यनीरजपाणिना ।
उपचारेण सा तुष्टा भार्या भवति कामिता ।
दीनाराणि ददात्यष्टौ प्रत्यहं परितोषिता ॥ ५ ॥

अब सुभगा-साधन कहते हैं – साधक उपवास कर के पर्वत, वन या मन्दिर में 'ॐ सुभगे स्वाहा' मन्त्र का १०००० जप करे । जपान्त में किन्नरी आती हैं और सन्तुष्ट होकर साधक की भार्या बनकर अपने कमल जैसे हाथों से उसकी सेवा करती हैं । नित्य आठ स्वर्णमुद्राएँ भी देती हैं ॥ ५ ॥

अथ विशालनेत्रासाधनम्

नीचगातटमासाद्य जपेदयुतसङ्ख्यकम् ।
प्रपूज्य सकलां रात्रिं प्रजपेद्रजनीक्षये ।
किन्नरी शीघ्रमायाति भार्या भवति कामिता ।
दीनाराणि ददात्यष्टौ प्रत्यहं परितोषिता ॥ ६ ॥

अब विशालनेत्रा-साधन कहा जाता है—

विशालनेत्रा-साधन करने के लिए नदीसंगम स्थान पर जाकर 'ॐ विशालनेत्रे स्वाहा' मन्त्र का १०००० जप करे। किन्नरी का पूजन करके रात्रि पर्यन्त जप करे। रात्रि के शेषकाल में किन्नरी साधक की भार्या बनकर आती हैं और सन्तुष्ट होकर नित्य ८ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं ॥ ६ ॥

अथ सुरतप्रियासाधनम्

नीचगासङ्गमे रात्रौ जपेदष्टसहस्रकम् ।
जपान्ते शीघ्रमायाति चात्मानं दर्शयत्यपि ।
स्थित्वा पुरो द्वितीयेऽह्नि वचनं भाषते पुनः ।
तृतीये दिवसे प्राप्ते भार्या भवति कामिता ।
दीनाराणि ददात्यष्टौ प्रत्यहं दिव्यवाससी ॥ ७ ॥

अब सुरतप्रिया-साधन कहा जाता है—

साधक रात्रि में नदी के संगमस्थल में 'ॐ सुरतप्रिये स्वाहा' मन्त्र का ८००० जप करे। प्रथम दिन सुरतप्रिया शीघ्र उपस्थित होकर अपनी दिव्य मूर्त्ति का दर्शन देती हैं। दूसरे दिन जपान्त में किन्नरी सम्मुख आकर बातचीत करती हैं। तीसरे दिन जपान्त में आकर भार्या बन जाती हैं। तदनन्तर प्रतिदिन दिव्य वस्त्र तथा आठ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं ॥ ८ ॥

अथ सुमुखीसाधनम्

शैलमूद्ध्र्न्यन्वहं मांसाहारेणायुतकं जपेत् ।
जपान्ते पुरतः स्थित्वा चुम्बत्यालिङ्गयत्यपि ।
तूष्णीम्भावेन सन्तुष्टा भार्या भवति कामिता ।
दीनाराणि ददात्यष्टौ दिव्यं कामिकभोजनम् ॥ ८ ॥

अव सुमुखी-साधन कहते हैं—

साधक प्रतिदिन पर्वतश्रृंग पर मांस की बलि चढ़ाकर 'ॐ सुमुखी स्वाहा' मन्त्र १०००० बार जपे। जपान्त में किन्नरी साधक के सम्मुख आकर मौन भाव से उसका चुम्बन, आलिंगन करती है और सन्तुष्ट होकर पत्नी बन जाती है। उसे नित्य भोजन-सामग्री और ८ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं ॥ ८ ॥

अथ दिवाकरमुखीसाधनम्

शैलमूर्ध्नि समास्थाय जपेदयुतसङ्ख्यकम् ।
रात्रावभ्यर्च्य प्रजपेन्मत्रमष्टसहस्रकम् ।
किन्नर्यन्तिकमायाति वाञ्छितार्थं प्रयच्छति ।

दीनाराणि ददात्यष्टौ भार्या भवति कामिता ।
रसं रसायनं सिद्धिद्रव्यं भोज्यं प्रयच्छति ॥ ९ ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रराजे किन्नरीसिद्धिसाधनं नाम त्रयोदशं पटलम् ।

अब दिवाकरमुखी का साधन कहते हैं—

साधक रात्रि में पर्वत-शिखर पर बैठकर 'ॐ दिवाकरमुखी स्वाहा' का १०००० जप करे तथा उत्तमरूपेण पूजन करके पुनः ८००० जप करे। जपान्त में किन्नरी समीप आकर भार्या बन जाती है और वांछित धन देती है। तदनन्तर नित्य रस, रसायन, सिद्धिद्रव्य, भोज्य पदार्थ तथा ८ स्वर्णमुद्राएँ देती हैं ॥ ९ ॥

भूतडामर महातन्त्र का तेरहवाँ पटल समाप्त ।

चतुर्दशं पटलम्

श्रीमत्युन्मत्तभैरव्युवाच

व्योमकेश ! महाकाल ! प्रलयानलविग्रह ! ।
सर्वलोकहितार्थाय क्रोधध्यानं सुरेश्वर ! ।
उन्मत्तभैरवं नत्वा पप्रच्छोन्मत्तभैरवी ।
परिषन्मण्डलं ब्रूहि यदि तुष्टोऽसि मे प्रभो ! ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरव को प्रणाम करके उन्मत्तभैरवी पूछती हैं—हे प्रभो ! हे व्योमकेश ! हे महाकाल ! हे प्रलयकालीन वह्नि के समान शरीर वाले तथा हे देवाधिदेव ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तब परिषन्मण्डलस्थ क्रोधदेवता के ध्यान का समस्त प्राणियों के कल्याण के लिए मुझे उपदेश करें ॥ १ ॥

श्रीमदुन्मत्तभैरव उवाच

परिषन्मण्डलं वक्ष्ये देवि ! ते ह्यवधारय ।
दुष्टात्मशमनं प्रोक्तं क्रोधराजेन यत् पुरा ।
महादेवाय कथितं वाञ्छितार्थप्रदायकम् ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—देवी ! तुम्हें परिषन्मण्डलस्थ क्रोधराज का ध्यान बताता हूँ, सुनो । इसे पहले क्रोधराज ने महादेव से कहा था । इसके द्वारा दुष्टों को दण्ड दिया जाता है और वांछित सिद्धि मिलती है ॥ २ ॥

चतुरस्रं चतुर्द्वारं चतुस्तोरणभूषितम् ।
भागैः षोडशभिर्युक्तं वप्रप्राकारशोभितम् ।
तन्मध्ये तु महाभीमं वज्रक्रोधं चतुर्भुजम् ।
ज्वालामालाकुलादीप्तं युगान्ताग्निसमप्रभम् ।
भिन्नाञ्जनमहाकायं कपालकृतभूषणम् ।
अट्टहासं महारौद्रं त्रिलोकेषु भयङ्करम् ।
दक्षिणोद्ध्वंकरे वज्रं तर्जनीं वामपाणिना ।
क्रोधमुद्राञ्च तदधःपाणिभ्यां धारिणं भजे ।
शशाङ्कशेखरं त्र्यक्षं सदा गोक्षीरपाण्डुरम् ।
महादेवं चतुर्बाहुं शूलचामरधारिणम् ।
चापशक्तिसमायुक्तं क्रोधदक्षे वृषासनम् ।
शङ्खचक्रगदाचामराढ्यं वामे खगासनम् ।
पृष्ठभागे तथा शक्रं सर्वालङ्कारभूषितम् ।

पीतवस्त्रं त्रिनेत्रञ्च हस्तिस्थं चामरान्वितम् ।
पुरतः कार्तिकेयञ्च मयूरस्थं विचिन्तयेत् ।
चामरव्यग्रहस्ताग्रं हिमकुन्देन्दुसन्निभम् ।
आग्नेयादीशपर्यन्तं द्वे द्वे शक्ती च कोणगे ।
सिंहध्वजान्वितामग्नौ महाभूतिन्यपि क्रमात् ।
नैर्ऋते सुरपूर्वाञ्च हारिणीं दैत्यनाशिनीम् ।
रत्नेश्वरीं भूषणीञ्च वायुकोणे न्यसेत् पुनः ।
न्यसेदीशे जगत्पालिनीञ्च पद्मावतीं पुनः ।
श्वेतामाद्यां परां गौरीमेवमष्टौ क्रमोदिताः ।
भूषिता नीलवस्त्रेण माल्यादिभिरलङ्कृताः ।
वेष्टिता नीलवस्त्रेण हुंकृतारीन् विनाशयेत् ।। ३ ।।

चतुष्कोणात्मक, चतुर्द्वारयुक्त, चार तोरणों से सुशोभित १६ अंशों से युक्त वप्र तथा प्राकार से शोभित परिमण्डल में क्रोधदेव विराजमान हैं। महाभयंकर क्रोधदेवता की मूर्त्ति अग्निशिखामाला समूह से उद्दीप्त है। वे प्रलयान्तकारी अग्नि के समान प्रभायुक्त हैं। उनका महान् शरीर अंजन वर्णवाला महारौद्र तथा त्रिभुवन के लिए भयानक है। वे नरकपालों के अलंकरण को धारण करते हैं और सर्वदा अट्टहास करते रहते हैं। वे चार हाथों वाले हैं। इनके दाहिने ऊपरी हस्त में वज्र तथा बायें ऊपरी हस्त में तर्जनी मुद्रा है। निचले दाहिने हाथ में क्रोधमुद्रा तथा बायें हाथ में भी क्रोधमुद्रा है। इन क्रोधदेव के दाहिनी ओर महादेव वृषभासन पर आसीन हैं। उनके चारों हाथों में क्रमशः त्रिशूल-चामर-धनुष तथा शक्ति है। इनके तीन नेत्र हैं। मुकुट में चन्द्रकला शोभित है और देह गोदुग्ध के समान सदा गौर वर्णवाला है। क्रोधदेव के वाम भाग में गरुड़ पर विष्णु आसीन हैं। इनके हाथों में शंख, चक्र, गदा तथा चामर हैं। क्रोधदेव की पीठ की ओर समस्त आभूषणों से सुशोभित इन्द्र हाथी पर विराजमान हैं। इनके तीन नेत्र हैं और हाथ में चामर विराजमान है। ये पीतवस्त्र धारण किये हैं। क्रोधदेव के चारों ओर महादेव, विष्णु, इन्द्र तथा कार्त्तिकेय चामर डुलाकर क्रोधराज को प्रसन्न कर रहे हैं। क्रोधराज के अग्निकोण से लेकर ईशानकोण पर्यन्त प्रत्येक कोण पर २-२ शक्ति विराजित हैं। अग्निकोण में सिंहध्वजा तथा महाभूतिनी शक्ति, नैर्ऋतकोण में सुरहासिनी तथा दैत्य-नाशिनी, वायुकोण में रत्नेश्वरी तथा भूषणी एवं ईशानकोण में जगत्पालिनी तथा पद्मावती शक्तियाँ हैं। प्रत्येक शक्तियों में से पहली श्वेतवर्णा है, दूसरी गौरवर्णा है एवं नीलवर्ण वाले वस्त्र पहनी हुई हैं। उनका समस्त शरीर नीलवर्ण के परिधान से ढका हुआ है तथा वे माला द्वारा सुशोभित हैं। हुंकरि द्वारा शत्रुओं का नाश करती हैं।। ३ ।।

नागिन्योऽप्सरसो यक्षकामिन्यो नागकन्यकाः ।
भूतिन्यश्चाम्बिकाः सर्वा भूताः प्रेताः पिशाचकाः ।
उच्चारात् क्रोधमन्त्रस्य विनश्यन्ति क्षणेन ते ॥ ४ ॥

इस क्रोधमन्त्र के उच्चारण से नागिनियाँ, नागकन्याएँ, अप्सराएँ, यक्षिणियाँ, भूतिनियाँ, भूत-प्रेत तथा पिशाचादि नष्ट हो जाते हैं ॥ ४ ॥

प्रालेयं बीजमुद्धृत्य क्रोधबीजत्रयं पुनः ।
अस्त्रत्रयाद्वज्रगदं क्रोधदीप्तमहापदम् ।
क्रोधं ज्वलद्वयं वायुं सादरं मारय द्वयम् ।
क्रोधबीजत्रयादस्त्रत्रयान्तमुद्धरेन्मनुम् ॥ ५ ॥

वज्रक्रोधदेव का मन्त्र--

ॐ हुं हुं हुं फट् फट् वज्रक्रोधदीप्त महाक्रोध ज्वल ज्वल मारय मारय हुं हुं हुं फट् फट् फट् ॥ ५ ॥

अस्य भाषितमात्रेण म्रियन्ते सर्वदेवताः ।
पतन्ति नरके घोरे शुष्यन्ति प्रस्फुटन्त्यपि ॥ ६ ॥

इस मन्त्र के उच्चारण से ही समस्त लौकिक देवता शुष्क, विदीर्ण तथा मृत हो जाते हैं तथा घोर नरक को प्राप्त हो जाते हैं ॥ ६ ॥

उद्धरेत् प्रथमं क्रोधं महाकालं निरञ्जनम् ।
शत्रुमायुधमन्त्रश्च क्रोधमन्त्रोऽयमीरितः ।
क्रोधमुद्रां विधायेत्थं मन्त्रं शिष्याय कीर्त्तयेत् ।
प्रालेयात् प्रविश क्रोध क्रोधबीजान्तमुद्धरेत् ।
ज्वालामालाकुलं ध्यायन् द्वितीयः स्यात् सुरान्तकः ॥ ७ ॥

'हुं हुं हुं फट् फट्' यह क्रोधमन्त्र है । ऊपर कही गयी क्रोधमुद्रा का प्रदर्शन कर यह मन्त्र शिष्य को प्रदान करे ।

'ॐ प्रविश हुं हुं' इस क्रोधमन्त्र का ध्यान-जप करने पर देवगण को भी विनाश करने की शक्ति मिल जाती है ॥ ७ ॥

अथ तस्याङ्गदेव्यो यास्तासां मन्त्रं वदाम्यहम् ।
विशाच्चक्षुः पदं गृह्य श्रीसिंहध्वजकारिणी ।
कूर्चं भूतेश्वरीबीजं सादरं क्रोधपूर्वतः ।
विशाद् भूतेश्वरं रौद्रं क्रोधात् पद्मावतीपदम् ।
धनुर्बाणपद गृह्य धारिणीकूर्चसंयुतम् ।
क्रोधस्य पृष्ठतोऽन्यस्य दक्षभागे पुनर्न्यसेत् ।
विषं निरञ्जनं रौद्रं बीजं गृह्य विभूतिनीम् ।

अङ्कुशधारिणी कूर्चं गृह्य वायुकलान्वितम् ।
क्रोधवामे न्यसेदेवं विषबीजं निरञ्जनम् ।
बहुरूपिणीमाभाष्य कपालिन्या दशान्विता ।
सुरतो हारिणी चिन्तामणिध्वजपदं ततः ।
नाशिनीति पदं प्रोच्य कूर्चान्तं मनुमुद्धरेत् ।
विषाद्वरपदाज्ज्वालिनीति पदमुदीरयेत् ।
ततः परं ज्वरपदाद्धारिणी पदमुद्धरेत् ।
पुष्पहस्ते पदश्चापि ईशानेशं निरञ्जनम् ।
विषं रत्नेश्वरीबीजं धूपहस्ते निरञ्जनम् ।
आग्नेय्यां विन्यसेद्देवीं धूपहस्तां सुशोभनाम् ।
विन्यसेन्नैर्ऋते भागे प्रालेयात् श्रीविभूषणीम् ।
गन्धहस्ते महाकालो बीजं ज्वलनवल्लभा ।
वायव्ये श्रीजगत्पालिनीपदं समुदीरयेत् ।
दीपहस्ते पदात् कालभैरवीं सादरं पुनः ॥ ८ ॥

अब क्रोधभैरव के सभी अंगदेवताओं के मन्त्र कहे जा रहे हैं—

'ॐ हुं चक्षुः श्रीसिंहध्वजधारिणी हुं'। 'ॐ हुं हुं पद्मावती धनुर्बाणधारिणी हुं'। इन दो मन्त्रों से क्रोधराज के पीठ की ओर के देवताओं की अर्चना करके फिर दक्षिण भाग की पूजा इस मन्त्र से करे—'ॐ हुं हुं विभूतिनी अंकुशधारिणी हुं'। क्रोधराज के वामभाग की अर्चना हेतु—'ॐ हुं बहुरूपिणी कपालिनी ध्वजवासिनी हुं'। ईशानकोण की अर्चना हेतु—'ॐ वरज्वालिनी ज्वरहारिणी हुं'। अग्निकोण हेतु—'ॐ धूपहस्ते हुं'। नैर्ऋतकोण हेतु—'ॐ श्रीविभूषणि गन्धहस्ते स्वाहा'। वायुकोण हेतु—'श्रीजगत्पालिनि दीपहस्ते हुं'। इन मन्त्रों से पूजन करे ॥ ८ ॥

मुद्रा सिंहध्वजाख्येयं क्रोधभूपेन भाषिता ।
मुष्टिमन्योऽन्यमास्थाय तर्जनीश्चापि वेष्टयेत् ॥ ९ ॥

मुद्रा-विधान इस प्रकार है—दोनों हाथ की मुट्ठियाँ बाँधकर आपस में सटायें और दोनों तर्जनियों को एक-दूसरे में लपेटे। यह है सिंहध्वजामुद्रा। इसे स्वयं क्रोधराज ने कहा है ॥ ९ ॥

अस्या वामकरस्यापि मुष्टिं कटितटे न्यसेत् ।
प्रसार्याकुञ्चयेदक्षतर्जनीमङ्कुशात्मिकाम् ॥ १० ॥

बायें हाथ की मुट्ठी को कटि तट पर रखे और दाहिने हाथ की मुट्ठी को प्रसारित करके पुनः संकुचित करे। इसमें तर्जनी को अंकुशाकार किये रहे ॥ १० ॥

कृत्वा तु मुष्टिमन्योऽन्यं वेष्टयेत्तर्जनीद्वयम् ।
प्रसारयेदुभे बाहुमूले धूपात्मिकं न्यसेत् ॥ ११ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठियाँ बाँधकर दोनों तर्जनियों को परस्पर लपेटे एवं दोनों बाहुओं को फैलायें ॥ ११ ॥

मुष्टिं कृत्वा ततोऽन्योऽन्यां प्रसार्य तर्जनीद्वयम् ।
बाहुमूले उभे स्थाप्ये गन्धमुद्रा प्रकीर्त्तिता ॥ १२ ॥

दोनों हाथों की मुट्ठियों को बाँधकर तर्जनीद्वय को फैलाकर बाहुमूल पर स्थापित करे । यह है गन्धमुद्रा ॥ १२ ॥

कृत्वाधो दक्षिणां मुष्टिं मध्यमाञ्च प्रसारयेत् ।
दीपमुद्रेति विख्याता वज्रपाणिविनिर्मिता ॥ १३ ॥

इति भूतडामरमहातन्त्रराजे परिषन्मण्डलक्रोधध्यान-विधिर्नाम चतुर्दशं पटलम् ।

दाहिने हाथ की मुट्ठी बाँधकर मध्यमा को नीचे फैलाये । यह है दीपमुद्रा । इसे वज्रपाणि ने कहा है ॥ १३ ॥

भूतडामर महातन्त्र का चौदहवाँ पटल समाप्त ।

पञ्चदशं पटलम्

श्रीमत्युन्मत्तभैरव्युवाच

अशेषदुष्टदलन ! सिद्धगन्धर्ववन्दित ! ।
प्रसन्नोऽसि यदा नाथ ! यक्षसिद्धिं तदा वद ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी उन्मत्तभैरव से पूछती हैं—हे नाथ ! आप समस्त दुष्टों का दलन करने वाले तथा सिद्ध-गन्धर्व द्वारा वन्दित हैं। यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं तब यक्षसिद्धि का उपदेश करें ॥ १ ॥

श्रीमदुन्मत्तभैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि भूतानां सिद्धिसाधनम् ।
येन विज्ञानमात्रेण लभ्यन्ते सर्वसिद्धयः ।
मनुमेषां प्रवक्ष्यामि यथावदवधारय ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—अब मैं भूतसिद्धि का उपाय कहता हूँ। इसे जान लेने पर सभी सिद्धियाँ प्राप्त होती हैं। तुम एकाग्र होकर सुनो ॥ २ ॥

विषं भूतेश्वरीबीजं वातमादरसंयुतम् ।
अपराजितमाख्यातं भूतानामधिदैवतम् ।
अनादिबीजं भूतेशं गृह्य तारकलान्वितम् ।
पवनोऽसौ समाख्यातो वाञ्छितार्थप्रदायकः ।
विषं निरञ्जनं वायुं सादरं पाशमुद्धरेत् ।
प्रणवञ्च ततो वातं कलया समलङ्कृतम् ।
श्मशानाधिपतेर्मन्त्रं क्रोधराजेन भाषितम् ।
प्रालेयाज्वालिनीं गृह्य यः कुलेश्वर ईरितः ।
विषादमन्त्रः सकलो वायुर्भूतेश्वरः स्मृतः ।
सृष्टेरनन्तः सकलस्तारात्मकिन्नरोत्तमः ॥ ३ ॥

'ॐ हुं यं'—यह अपराजित मन्त्र भूतों के देवता के समान है।
'ॐ हुं ॐ'—यह पवनाख्य मन्त्र वांछितफलप्रद है।
'ॐ हुं यं आं ॐ यं'—श्मशानाधिपतिभूत के इस मन्त्र को क्रोधराज ने कहा है।
'ॐ हुं हुं यं'—यह अनन्त सृष्टि के सभी वायुभूतेश्वरकिन्नरों का मन्त्र है ॥ ३ ॥

वज्रस्य पुरतः स्थित्वा जपेल्लक्षं पुरस्कृतः ।

अथातः पौर्णमास्यान्तु समभ्यर्च्य यथाबलिम् ।
सितौदनं घृतं क्षीरमैक्षवं पायसं पुनः ।
धूपयेद् गुग्गुलुं धूपं सकलां यामिनीं जपेत् ।
प्रभातेऽन्तिकमायाति वदेदाज्ञां प्रयच्छ मे ।
साधकेनापि वक्तव्यं भव त्वं किङ्करो मम ।
ततोऽसौ किङ्करो भूत्वा राज्यं यच्छति कामिकम् ।
करोति निग्रहं शत्रोर्नारीमानीय यच्छति ।
साधकः सप्तकल्पानि जीवत्येव न संशयः ।
यथेष्टं लभते मन्त्री साधयित्वाऽपराजितम् ।
एवमन्याश्च साध्यन्ते पवनाद्यष्टसिद्धयः ॥ ४ ॥

पूर्वोक्त मन्त्रों की साधन-विधि कहते हैं। प्रथमतः पुरश्चरण करके एक लाख जप करे। तदनन्तर पूर्णिमा की रात्रि को यथाविधि पूजन करके बलिदान दे। तदनन्तर सिततण्डुल, घृत, दुग्ध, इक्षु एवं पायस निवेदन करके गुग्गुलु का धूप प्रदान करे। अब पुनः रात्रि पर्यन्त जप करना चाहिए। प्रभात के समय देवता उपस्थित होकर साधक से वर माँगने को कहते हैं। तब साधक को कहना चाहिए कि आप मेरे भृत्य हो जायें। तब अपराजित देवता साधक के भृत्य बनकर उसे राज्य प्रदान करते हैं। साधक के शत्रुओं का नाश करते हैं। वांछित स्त्री को लाकर अर्पित करते हैं। इस साधन से सिद्ध होकर मानव सात कल्पों तक जीवित रहता है। इस साधना से अभिलषित द्रव्य भी मिलता है ॥ ४ ॥

गुरुचरणसरोजाज्जाप्यमन्त्रस्य रूपम्
मुखहृदयदृशा वाप्याकृतिर्लक्ष्य सम्यक् ।
यदि निगदितदेशध्यानमुद्राविधिज्ञो,
जपति फलति सिद्धिर्नान्यथा क्रोधवाक्यम् ॥ ५ ॥

साधक गुरु से मन्त्र लेकर १००००० जप करे। ध्यान, मुद्रा तथा पूजा-विधि को जानकर जप करने से सिद्धि अवश्य प्राप्त होती है। यह क्रोधराज का कथन है, जो अन्यथा नहीं होता ॥ ५ ॥

तपसोग्रेण तुष्टेन भक्त्या क्रोधनृपेण यत् ।
गदितं शाम्भवं ज्ञानं भुक्तिमुक्तिप्रदायकम् ।
कष्टेन महता लब्धं तदहं भैरवाननात् ।
विख्यातं त्रिषु लोकेष्वप्रकाश्यं ते प्रकाशितम् ।
किङ्करास्त्रिदशा येन दास्य एषां वराङ्गनाः ।
मोक्षप्रभृतयो येन लभ्यन्ते त्रिषु दुर्लभाः ।

भवस्थितिलया येन त्रिदशानां नृणामपि ।
पूज्यन्ते त्रिषु लोकेषु नश्यते नारकं तमः ।
न मृते विषयो देयो मृते वासो गरीयसी ।
भक्तिहीने दुराचारे हिंसाव्रतपरायणे ।
अलसे दुर्जने दुष्टे गुरुभक्तिविवर्जिते ।
एतत्ते वादिविज्ञानं यत् सुरैरपि दुर्लभम् ।
अन्यथा क्रोधमन्त्रेण विनाशो जायते ध्रुवम् ।
उन्मत्तभैरवः प्राह भैरवीं सिद्धिपद्धतिम् ।
तन्त्र चूडामणौ दिव्ये तन्त्रेऽस्मिन् भूतडामरे ।। ६–७ ।।

इति भूतडामरे महातन्त्रराजे अपराजितादिमुखयक्षसिद्धि-साधनविधिर्नाम पञ्चदशं पटलम् ।

क्रोधराज ने किसी साधक की उग्र तपस्या से प्रसन्न होकर इस भुक्ति-मुक्ति-प्रद शिवजी द्वारा प्राप्त ज्ञान को कहा है । मैंने इसे बड़े कष्ट से भैरव से प्राप्त किया, ऐसा प्रसिद्ध है । आज तक अप्रकाशित यह ज्ञान मैंने तुम्हारे लिए प्रकाशित किया है, ऐसा तीनों लोकों में प्रसिद्ध है । इस साधन के बल से देवता भी भृत्य हो जाते हैं और देवीगण दासी बन जाती हैं । इस साधना की कृपा से त्रैलोक्य-दुर्लभा मुक्ति आदि मिलती है । इसी के द्वारा देवताओं तथा मनुष्यों की सृष्टि, स्थिति एवं लय भी सम्भव है । भक्तिहीन, दुराचाररत, हिंसक, आलसी, दुर्जन, दुष्टचित्त, गुरुभक्तिरहितों को यह साधना नहीं बताना चाहिए । जो भक्तिरहित व्यक्ति से यह साधना बतलाता है, क्रोधराज उसका विनाश कर देते हैं । उन्मत्तभैरव ने उन्मत्तभैरवी से जिस-जिस विषय के सम्बन्ध में वार्त्ता की है, वह सब तन्त्रचूड़ामणि ग्रन्थ में कहा गया है, उसी को इस भूतडामरतन्त्र में विशेष रूप से कहा जा रहा है ।। ६-७ ।।

भूतडामर महातन्त्र का पन्द्रहवाँ पटल समाप्त ।

षोडशं पटलम्

श्रीमत्युन्मत्तभैरव्युवाच

भूतेश ! परमेशान ! रवीन्द्वग्निविलोचन ! ।
यदि तुष्टोऽसि देवेश ! योगिनीसाधनं वद ॥ १ ॥

उन्मत्तभैरवी कहती हैं—हे चन्द्र-सूर्य-अग्नि नेत्रों वाले भूतेश्वर ! परमेश्वर ! देवेश ! यदि आप मुझ पर प्रसन्न हैं, तब योगिनी-साधना का उपदेश कीजिए ॥ १ ॥

श्रीमदुन्मत्तभैरव उवाच

अथातः सम्प्रवक्ष्यामि योगिनीसाधनोत्तमम् ।
सर्वार्थसाधनं नाम देहिनां सर्वसिद्धिदम् ।
अतिगुह्या महाविद्या देवानामपि दुर्लभा ।
यासामभ्यर्चनं कृत्वा यक्षेशो भुवनाधिपः ।
तासामाद्यां प्रवक्ष्यामि सुराणां सुन्दरि ! प्रिये ! ।
यस्याश्चाभ्यर्चनेनैव राजत्वं लभते नरः ॥ २ ॥

उन्मत्तभैरव कहते हैं—हे देवी ! अब मैं तुमसे योगिनी-साधन का उत्तम विधान कहता हूँ । इससे सर्वार्थसिद्धि मिलती है । यह विधान अतिगोपनीय है तथा देवताओं के लिए भी दुर्लभ है । जिनकी अर्चना करके यक्षेश्वर त्रिभुवन के अधिपति हो गये हैं एवं जिनकी आराधना से उपासक को राजत्व मिलता है, उसे कहता हूँ ॥ २ ॥

अथ प्रातः समुत्थाय कृत्वा स्नानादिकं शुभम् ।
प्रासादश्च समासाद्य कुर्यादाचमनं ततः ।
प्रणवान्ते सहस्रारं हुं फट् दिग्बन्धनं चरेत् ।
प्राणायामं ततः कुर्यान्मूलमन्त्रेण मन्त्रवित् ।
षडङ्गं मायया कुर्यात् पद्ममष्टदलं लिखेत् ।
तस्मिन् पद्मे तथा मन्त्री जीवन्यासं समाचरेत् ।
पीठे देवान् समभ्यर्च्य ध्यायेद्देवीं जगत्प्रियाम् ।
पूर्णचन्द्रनिभां देवीं विचित्राम्बरधारिणीम् ।
पीनोत्तुङ्गकुचां वामां सर्वज्ञामभयप्रदाम् ।
इति ध्यात्वा च मूलेन दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।

पुनर्धूपं निवेद्यैव नैवेद्यं मूलमन्त्रतः ।
गन्धचन्दनताम्बूलं सकर्पूरं सुशोभनम् ॥ ३ ॥

प्रातः उठकर शौच-स्नानादि करके अपने घर में आकर 'हं' मन्त्र से आचमन करे। 'सहस्रारं हुं फट्' से दिग्बन्धन करे और मूलमन्त्र द्वारा प्राणायाम करना चाहिए। षडंग-न्यास को 'ह्रीं' मन्त्र से करके अष्टदल पद्म बनाये। इसमें प्राणप्रतिष्ठा करके पीठपूजन द्वारा देवी का ध्यान करें। देवी पूर्ण चन्द्रमा के समान आभायुता हैं। वे विचित्र वस्त्र धारण करती हैं। उनके स्तनद्वय स्थूल तथा उत्तुङ्ग हैं। वे सर्वज्ञा तथा वर एवं अभय देने वाली हैं। ऐसे रूप का चिन्तन करके तब ध्यान करे। इस ध्यान के अनन्तर मूलमन्त्र से पाद्यादि प्रदान करे। पुनः मूलमन्त्र से धूपदान देकर नैवेद्य अर्पित करे। तदनन्तर गन्ध-चन्दन-कर्पूरादि से सुगन्धित ताम्बूल अर्पित करे ॥ ३ ॥

प्रणवान्ते भवनेशि ! आगच्छ सुरसुन्दरि ! ।
वह्निजाया जपेन्मत्रं त्रिसन्ध्यश्च दिने दिने ।
सहस्रैकप्रमाणेन ध्यात्वा देवीं सदा बुधः ।
मासान्तदिवसं प्राप्य बलिपूजां सुशोभनाम् ।
कृत्वा च प्रजपेन्मन्त्रं निशीथे सुरसुन्दरी ।
सुदृढं साधकं ज्ञात्वाऽऽयाति सा साधकालये ।
सुप्रेम्णा साधकाग्रे सा सदा स्मेरमुखी ततः ।
दृष्ट्वा देवीं साधकेन्द्रो दद्यात् पाद्यादिकं शुभम् ।
सचन्दनं सुमनसो दत्त्वाभिलषितं वदेत् ।
मातरं भगिनीं वाथ भार्यां वा भक्तिभावतः ।
यदि माता तदा वित्तं द्रव्यश्च सुमनोहरम् ।
नृपतित्वं प्रार्थितं यत्तद्ददाति दिने दिने ।
पुत्रवत् पालयेल्लोके सत्यं सत्यं सुनिश्चितम् ।
स्वसा ददाति द्रव्यश्च दिव्यं वस्त्रं तथैव च ।
दिव्यां कन्यां समानीय नागकन्यां दिने दिने ।
यद्यद् भूतं वर्तमानं भविष्यच्चैव किं पुनः ।
तत् सर्वं साधकेन्द्राय निवेदयति निश्चितम् ।
यद्यत् प्रार्थयते सर्वं सा ददाति दिने दिने ।
मातृवत् पालयेल्लोके कामनाभिर्मनोगतैः ।
भार्या वा यदि सा देवी साधकस्य मनोहरा ।
राजेन्द्रः सर्वराजानां संसारे साधकोत्तमः ।
स्वर्गे लोके च पाताले गतिः सर्वत्र निश्चिता ।

यद्यद्ददाति सा देवी कथितुं नैव शक्यते।
तया सार्द्धञ्च सम्भोगं करोति साधकोत्तमः।
अन्यस्त्रीगमनं त्याज्यमन्यथा नश्यति ध्रुवम् ॥ ४ ॥

'ॐ आगच्छ सुरसुन्दरि स्वाहा'। यह मूल मन्त्र है, इससे तीनों सन्ध्याओं में देवी का ध्यान करके प्रति सन्ध्या में १००० जप करे। ऐसा एक मास तक कर के मासान्त में पूजा करके बलि प्रदान करे। तब एकाग्र होकर जप करे। देवी साधक की दृढ़ भक्ति देखकर रात्रि में उसके पास आती हैं और देवी सदा हास्यमुखी तथा प्रेमविशिष्टा होकर साधक के पास उपस्थित रहती है। तब साधक देवी को पाद्य, अर्घ्य आदि प्रदान करे। चन्दन के साथ पुष्पार्पण करके मन का अभिलषित पदार्थ-वर माँगे। देवी को माता, भगिनी या भार्या में से किसी एक शब्द से सम्बोधित करे। मातृसम्बोधन से वित्त, उत्तम द्रव्य, राजत्व तथा वांछित पदार्थ देकर देवी साधक का पुत्रवत् पालन करती हैं। भगिनी मानने पर वे नाना द्रव्य, दिव्य कन्या तथा दिव्य वस्त्र देती हैं। वे नित्य भूत, वर्तमान तथा भविष्य भी बतलाती हैं। भार्या मानने पर साधक राजाओं में श्रेष्ठ होता है और स्वर्ग एवं पाताल में जा सकता है। देवी जो-जो प्रदान करती हैं, उसका वर्णन नहीं किया जा सकता। भार्या मानने पर वह इनके साथ सम्भोग कर सकता है, पर अन्य स्त्री से सम्भोग छोड़ना होगा, नहीं तो क्रोधराज साधक का विनाश कर देते हैं ॥ ४ ॥

ततोऽन्यत्साधनं वक्ष्ये निर्मितं ब्रह्मणा पुरा।
नदीतीरं समासाद्य कुर्यात् स्नानादिकं ततः।
पूर्ववत् सकलं कार्यं चन्दनैर्मण्डलं लिखेत्।
स्वं मन्त्रं तत्र संलिख्यावाह्य ध्यायेन्मनोहराम्।
कुरङ्गनेत्रां शरदिन्दुवक्त्रां बिम्बाधरां चन्दनगन्धलिप्ताम्।
चीनांशुकां पीनकुचां मनोज्ञां श्यामां सदा कामदुहां विचित्राम्।
एवं ध्यात्वा यजेद्देवीमगुरुधूपदीपकैः।
गन्धपुष्पं रसञ्चैव ताम्बूलादींश्च मूलतः।
तारं माया आगच्छ मनोहरे वह्निवल्लभे।
कृत्वायुतं प्रतिदिनं जपेन्मन्त्रं प्रसन्नधीः।
मासान्तदिवसं प्राप्य कुर्याच्च जपमुत्तमम्।
आनिशीथं जपेन्मत्रं ज्ञात्वा च साधकं दृढम्।
गत्वा च साधकाभ्याशे सुप्रसन्ना मनोहरा।
वरं वरय शीघ्रं त्वं यत्ते मनसि वर्तते।
साधकेन्द्रोऽपि तां भक्त्या पाद्याद्यैरर्चयेन्मुदा।

प्राणायामं षडङ्गञ्च मायया च समाचरेत् ।
सद्यो मांसबलिं दत्त्वा पूजयेच्च समाहितः ।
चन्दनोदकपुष्पेण फलेन च मनोहरा ।
ततोऽर्चिता प्रसन्ना सा पुष्णाति प्रार्थितञ्च यत् ।
स्वर्णशतं साधकाय सा ददाति दिने दिने ।
सावशेषं व्ययं कुर्यात् स्थिते तत्र न दास्यति ।
अन्यस्त्रीगमनं तस्य न भवेत् सत्यमीरितम् ।
अव्याहतगतिस्तस्य भवतीति न संशयः ।
इति ते कथिता विद्या सुगोप्या च सुरासुरैः ।
तव स्नेहेन भक्त्या च वक्ष्येऽहं परमेश्वरि ! ॥ ५ ॥

अब अन्य साधन कहता हूँ। इसे पहले ब्रह्मा ने कहा है। तदीतट पर स्नानादि करके तथा चौथे श्लोक में अंकित एवं पूर्वकथित कार्य करके चन्दन से मण्डल लिखे। इसमें अपना मन्त्र लिखे और आवाहन करके मनोहरा का ध्यान करे। उनके मृग के समान नेत्र हैं। मुखमण्डल शरच्चन्द्र के समान है। बिम्बफल के समान अधर हैं। समस्त अंग सुगन्धित चन्दन से लिपा हुआ है। परिधान पट्टवस्त्र का है। स्तन अत्यन्त भारी तथा मूर्त्ति अत्यन्त मनोहर श्यामवण की है। ये साधक की कामना पूर्ण करती हैं। इस प्रकार से ध्यान करके अगुरु का धूपदान करे और दीपक से भगवती की आरती करे। मूलमन्त्र द्वारा गन्ध, पुष्प तथा ताम्बूल निवेदित करे। यह मूलमन्त्र है— 'ॐ ह्रीं आगच्छ मनोहरे स्वाहा'। इसका नित्य १०००० जप करे। एक माह तक ऐसा करने के उपरान्त मासान्त में रात्रिपर्यन्त जप करता रहे। ऐसा करने पर मनोहरा योगिनी साधक के पास आकर वर माँगने को कहती हैं। तब साधक भक्ति-पूर्वक पाद्य, अर्घ्य द्वारा अर्चना करके 'ह्रीं' मन्त्र से प्राणायाम एवं षडंगन्यास करके ताजे मांस की बलि देकर संयत रूप से पूजा करे। चन्दनमिश्रित जल, पुष्प तथा फल द्वारा अर्चना करने से योगिनी प्रसन्न होकर प्रार्थित वर देती हैं और प्रतिदिन वे साधक को १० सुवर्णमुद्राएँ भी देती हैं। इसे नित्य खर्च कर देना चाहिए, अन्यथा देवी भविष्य में सुवर्ण नहीं देगी। इस साधना में अन्य स्त्री से सम्भोग-सम्पर्क नहीं रखना चाहिए। इस साधना से साधक की सर्वत्र अव्याहत गति हो जाती है। हे भैरवी ! यह अत्यन्त गोपनीय विद्या है। केवल तुम्हारे स्नेह तथा भक्ति को देखकर इसे मैं प्रकाशित कर रहा हूँ ॥ ५ ॥

ततो वक्ष्ये महाविद्यां श्रृणुष्वैकमनाः प्रिये ! ।
गत्वा वटतलं देवीं पूजयेत् साधकोत्तमः ।
प्राणायामं षडङ्गञ्च माययाथ समाचरेत् ।
सद्यो मांसबलिं दत्त्वा पूजयेत्तां समाहितः ।

अर्घ्यमुच्छिष्टरक्तेन दद्यात्तस्मै दिने दिने ।
प्रचण्डवदनां गौरीं पक्वबिम्बाधरां प्रियाम् ।
रक्ताम्बरधरां वामां सर्वकामप्रदां शुभाम् ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रमयुतं साधकोत्तमः ।
सप्तदिनं समभ्यर्च्य चाष्टमे दिवसेऽर्चयेत् ।
कायेन मनसा वाचा पूजयेच्च दिने दिने ।
तारं मायां तथा कूर्चं रक्षाकर्मणि तद्बहिः ।
आगच्छ कनकान्ते च बहिः स्वाहा महामनुः ।
आनिशीथं जपेन्मन्त्रं बलिं दत्त्वा मनोहरम् ।
साधकेन्द्रं दृढं मत्वा प्रयाति साधकालये ।
साधकेन्द्रोऽपि तां दृष्ट्वा दद्यादर्घ्यादिकं ततः ।
ततः सपरिवारेण भार्या स्यात् कामभोजनैः ।
वस्त्रभूषादिकं दत्त्वा याति सा निजमन्दिरम् ।
एवं भार्या भवेन्नित्यं साधकाज्ञानुरूपतः ।
आत्मभार्यां परित्यज्य भजेत्ताञ्च विचक्षणः ।। ६ ।।

अब महाविद्या-साधना कहते हैं। साधक वटवृक्ष के तल में जाकर देवी की पूजा करे। 'ह्रीं' मन्त्र से प्राणायाम तथा षडंगन्यास करके ताजा मांस की बलि देकर संयतचित्त से पूजन करे। इस प्रकार नित्य पूजन करे तथा उच्छिष्ट रक्त से अर्घ्य प्रदान करे। देवी का आकार इस प्रकार है—अत्यन्त प्रचण्ड मुख, गौरवर्ण, पक्व बिम्बीफल के समान ओष्ठ तथा रक्तवर्ण के वस्त्रों को धारण करने वाली हैं। साधक की समस्त कामना पूर्ण करती हैं। इस प्रकार चिन्तन करके १०००० मूलमन्त्र का जप करे। सात दिन तक जप करके आठवें दिन पूजन करे। देवी का मूलमन्त्र है—'ॐ ह्रीं हुं रक्ष कर्माणि आगच्छ कनकान्ते स्वाहा'। तदनन्तर उत्तम बलि देकर रात्रि में मन्त्र का जप करे। तब देवी साधक को दृढ़ प्रतिज्ञा वाला जानकर उसके पास आती हैं। उस समय साधक पाद्य-अर्घ्य के द्वारा देवी की अर्चना करे। इससे देवी साधक की भार्या होकर रहती हैं। वे साधक को वस्त्राभूषणादि भी देकर वह अपने धाम को जाती हैं। साधक उन्हें भार्या रूप में पाकर अपनी स्त्री का त्याग करके उसके साथ स्त्री के समान व्यवहार करे ॥ ६ ॥

ततः कामेश्वरीं वक्ष्ये सर्वकामफलप्रदाम् ।
प्रणवं ह्रीं आगच्छ कामेश्वरि स्वाहेति जपेत् ।
वह्निभार्यामहामन्त्रं साधकानां सुखावहम् ।
पूर्ववत् सकलं कृत्वा भूर्जपत्रे सुशोभने ।
गोरोचनाभिः प्रतिमां विनिर्मितामलङ्कृताम् ।

शय्यामारुह्य प्रजपेन्मन्त्रमेकमनास्ततः ।
सहस्रैकप्रमाणेन मासमेकं जपेद्बुधः ।
घृतेन मधुना दीपं दद्याच्च सुसमाहितः ।
कामेश्वरीं शशाङ्कास्यां चलत्खञ्जनलोचनाम् ।
सदा लोलगतिं कान्तां कुसुमास्त्रशिलीमुखाम् ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं निशीथे याति सा सदा ।
दृष्ट्वा च साधकश्रेष्ठमाज्ञां देहीति तं वदेत् ।
गत्वा च साधकाभ्यर्णे तद्भक्त्याऽऽकृष्ट मानसा ।
स्त्रीभावेन मुदा तस्यै दद्यात् पाद्यादिकं ततः ।
सुप्रसन्ना महादेवी साधकं साधयेत् सदा ।
अन्नाद्यैरतिभोगेन पतिवत् लालयेत् सदा ।
नीत्वा रात्रिं सुखैश्वर्यैर्दत्त्वा च विपुलं धनम् ।
वस्त्रालङ्कारद्रव्याणि प्रभाते याति निश्चितम् ।
एवं प्रतिदिनं तस्य सिद्धिः स्यात् कामरूपतः ॥ ७ ॥

अब सर्वकामप्रदा कामेश्वरी का मन्त्र तथा उसका साधन कहा जाता है। 'ॐ ह्रीं आगच्छ कामेश्वरि स्वाहा'। यह मन्त्र साधक के लिए सुखदायक है। पूर्ववत् समस्त न्यास-पूजनादि कार्य करके भोजपत्र पर गोरोचन से सुशोभना देवी की प्रतिमूर्त्ति अंकित करके शय्या पर बैठकर एकाग्रचित्त से मन्त्र का जप करे। इस प्रकार नित्य १००० जप करे। तदनन्तर घृत तथा शहद मिलाकर प्रदीप जलाकर देवी का इस प्रकार ध्यान करे—कामेश्वरी चन्द्रवदना हैं। उनके नेत्र खंजन के समान चंचल हैं। उनके हाथों में कुसुम तथा भ्रमर अस्त्ररूपेण हैं। इस प्रकार ध्यान करके रात्रि में पुनः मन्त्र का जप करे। तब देवी आकर वर माँगने को कहती है। तब साधक स्त्री की भावना से देवी को पाद्य-अर्घ्य प्रदान करे। देवी प्रसन्न होकर उसका कार्य साधन करके अन्नादि विविध भक्ष्य द्रव्य प्रदान करके उसका पतिवत् पालन करती हैं। विविध प्रकार के सुख भोगों से रात बिताकर साधक को विपुल वस्त्र-अलंकार, धनादि देकर सुबह वापस चली जाती है। इस प्रकार प्रतिदिन इच्छानुरूप सिद्धि मिलती है अर्थात् देवी नित्य आती रहती हैं ॥ ७ ॥

ततः पत्रे विनिर्माय पुत्तलीं ध्यानरूपतः ।
सुवर्णवर्णां गौराङ्गीं सर्वालङ्कारभूषिताम् ।
नूपुराङ्गदहाराढ्यां रम्याश्च पुष्करेक्षणाम् ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं दद्याच्च पाद्यमुत्तमम् ।
चन्दनेन प्रधानेन जातीपुष्पेण यत्नतः ।

गुग्गुलुं धूपदीपञ्च दद्यान्मूलेन साधकः।
तारं माया तथाऽऽगच्छ रतिसुन्दरि पदं ततः।
वह्निजायाष्टसाहस्रं जपेन्मन्त्रं दिने दिने।
मासान्तदिवसं प्राप्य कुर्यात् पूजादिकं शुभाम्।
घृतदीपं तथा गन्धं पुष्पं ताम्बूलमेव च।
तावन्मन्त्रं जपेद्विद्वान् यावदायाति सुन्दरी।
ज्ञात्वा दृढं साधकेन्द्रं निशीथे याति निश्चितम्।
ततस्तमर्चयेद्भक्त्या जातीकुसुममालया।
सन्तुष्टा सा साधकेन्द्रं तोषयेत् प्रीतिभोजनैः।
भूत्वा भार्या च सा तस्मै ददाति वाञ्छितं वरम्।
भूषादिकं परित्यज्य प्रभाते याति निश्चितम्।
साधकाज्ञानुरूपेण सा चायाति दिने दिने।
निर्जने प्रान्तरे देवि सिद्धः स्यान्नात्र संशयः।
त्यक्त्वा भार्यां ताञ्च भजेदन्यथा नश्यति ध्रुवम्॥ ८॥

ध्यान के अनुरूप भोजपत्र पर एक पुतली बनाकर उसमें देवी का ध्यान करे। देवी सुवर्ण के समान गौरवर्णा तथा नूपुर आदि गहनों से सजी हुई हैं। वे अत्यन्त मनोहरा हैं। उनके नेत्र कमल के समान हैं। इस प्रकार ध्यान करके मन्त्र का जप करे। उसके बाद पाद्य, उत्तम चन्दन, चमेली आदि के पुष्प, गुग्गुलु धूप, दीप को मूलमन्त्र से अर्पित करे। मूलमन्त्र इस प्रकार है—'ॐ ह्रीं आगच्छ रतिसुन्दरि स्वाहा'। इसका नित्य १००० जप एक माह तक करे। मासान्त में पूजा करके घृत का दीपक, गन्ध, पुष्प, ताम्बूल अर्पित करके पुनः मन्त्र का जप करे। तब सुन्दरी साधक को दृढ़ निश्चय वाला जानकर रात्रि में उसके पास आती हैं। साधक चमेली पुष्प की माला से भक्तिपूर्वक उनकी अर्चना करे। देवी प्रसन्ना होकर प्रीतिदायक भोजन खिलाकर साधक को सन्तुष्ट करती हैं और साधक की पत्नी होकर उसे वांछित वर देकर भूषणादि को वहीं छोड़कर प्रतिदिन सुबह चली जाती हैं। साधक इस प्रकार निर्जन स्थान में सिद्धि प्राप्त करके अपनी पत्नी का त्याग कर दे, अन्यथा वह नष्ट हो जाता है॥ ८॥

ततोऽन्यत् साधनं वक्ष्ये स्वगृहे शिवसन्निधौ।
वेदाद्यं भुवनेशीञ्चेहागच्छ पद्मिनि ततः।
पावकश्च महामन्त्रः पूर्ववत् सकलं ततः।
मण्डलं चन्दनैः कृत्वा मूलमन्त्रं लिखेत्ततः।
पद्माननां श्यामवर्णां पीनोत्तुङ्गपयोधराम्।

कोमलाङ्गीं स्मेरमुखीं रक्तोत्पलदलेक्षणाम् ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रञ्च दिने दिने ।
मासान्ते पूर्णिमां प्राप्य विधिवत् पूजयेन्मुदा ।
आनिशीथं जपं कुर्याद्दृढाभ्यासेन साधकः ।
सर्वत्र कुशलं दृष्ट्वा याति सा साधकालयम् ।
भूत्वा भार्या साधकं हि तोषयेद्विविधैरपि ।
भोग्यद्रव्यैर्भूषणाद्यैः पद्मिनी सा दिने दिने ।
पतिवत् पालयेल्लोके नित्यं स्वर्गे च सर्वदा ।
त्यक्त्वा भार्यां भजेत्ताञ्च साधकेन्द्रः सदा प्रियः ॥ ९ ॥

अब अन्य साधन कहा जा रहा है । साधक अपने घर में या शिवमन्दिर में 'ॐ ह्लीं आगच्छ पद्मिनि स्वाहा' मन्त्र का जप करे । पूर्ववत् समस्त पूजाकृत्य करके रक्तचन्दन से यह मन्त्र लिखे । अब देवी का ध्यान करे । देवी पद्मासना तथा श्यामवर्णा हैं । उनके स्तनद्वय स्थूल तथा ऊँचे हैं । शरीर अति कोमल है । चेहरा हास्यपूर्ण तथा लाल कमल के समान उनके नेत्र हैं । इस प्रकार ध्यान करके एकाग्र हो प्रतिदिन प्रतिपदा से पूर्णिमा तक एक मास १००० जप करे । फिर पूर्णिमा के दिन विधिवत् पूजन करके रात्रि पर्यन्त एकाग्र हो पुनः जप करे । रात्रि में देवी आकर उसकी पत्नी बनकर विविध भक्ष्य द्रव्य तथा भूषणादि से साधक को प्रसन्न करती हैं । पद्मिनी देवी साधक का पतिवत् पालन करके उसे स्वर्ग दिखलाती है । उसके बाद साधक को अपनी पत्नी का त्याग करके पद्मिनी का प्रिय बनना चाहिए ॥ ९ ॥

ततो वक्ष्ये महाविद्यां विश्वामित्रेण धीमता ।
ज्ञात्वा या साधिता विद्या बला चातिबला प्रिये ! ।
प्रणवान्ते महामाया नटिनी पावकप्रिया ।
महाविद्येह कथिता गोपनीया प्रयत्नतः ।
अशोकस्य तटं गत्वा स्नानं विधिवदाचरेत् ।
मूलमन्त्रेण सकलं कुर्याच्च सुसमाहितः ।
त्रैलोक्यमोहिनीं गौरीं विचित्राम्बरधारिणीम् ।
विचित्रालङ्कृतां रम्यां नर्त्तकीवेशधारिणीम् ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रञ्च दिने दिने ।
मांसोपहारैः सम्पूज्य धूपदीपौ निवेदयेत् ।
गन्धचन्दनताम्बूलं दद्यात्तस्यै सदा बुधः ।
मासमेकन्तु तां भक्त्या पूजयेत् साधकोत्तमः ।
मासान्तदिवसं प्राप्य कुर्याच्च पूजनं महत् ।

अर्द्धरात्रौ भयं दत्त्वा किञ्चित् साधकसत्तमे ।
सुदृढं साधकं मत्वा याति सा साधकालयम् ।
विद्याभिः सकलाभिश्च किञ्चित् स्मेरमुखी ततः ।
वरं वरय शीघ्रं त्वं यत्ते मनसि वर्त्तते ।
तच्छ्रुत्वा साधकश्रेष्ठो भावयेन्मनसा धिया ।
मातरं भगिनीं वापि भार्यां वा प्रीतिभावतः ।
कृत्वा सन्तोषयेद् भक्त्या नटिनी तत्करोत्यलम् ।
माता स्याद् यदि सा देवी पुत्रवत् पालयेन्मुदा ।
अन्नाद्यैरुपहारैश्च ददाति चारुभोजनम् ।
स्वर्णशतं सिद्धिद्रव्यं सा ददाति दिने दिने ।
भगिनी यदि सा कन्यां देवीं वा नागकन्यकाम् ।
राजकन्यां समानीय सा ददाति दिने दिने ।
अतीतानागतां वार्त्तां सर्वं जानाति साधकः ।
भार्या स्याद् यदि सा देवी ददाति विपुलं धनम् ।
अन्नाद्यैरुपहारैश्च ददाति कामभोजनम् ।
स्वर्णशतं सदा तस्मै सा ददाति ध्रुवं प्रिये ! ।
यद्यद् वाञ्छति तत् सर्वं ददाति नात्र संशयः ॥ १० ॥

अब बला-अतिबला विद्या का साधन कहा जा रहा है। श्रीविश्वामित्र ने इसका साधन किया था। 'ॐ ह्रीं नटिनी स्वाहा' यह विद्या अति गोपनीय है। अशोक वृक्ष के नीचे जाकर विधिवत् मूलमन्त्र को पढ़ते हुए शौच-स्नानादि कार्य सम्पन्न करे। यह देवी त्रिभुवन का मोहन करने वाली, गौरवर्णा, विचित्र वस्त्रधारिणी, नाना अलंकारसम्पन्न, आकृति से मनोहरा तथा नर्तकी का वेश धारण किये रहती हैं। इस प्रकार ध्यान करके एक मास तक उक्त मन्त्र को नित्य १००० जपे। मांस के उपहार से देवी का पूजन करके धूप, दीप, गन्ध, चन्दन तथा ताम्बूल अर्पित करे। मासान्त में महत् पूजन करे और पुनः रात्रि में जप करे। अर्धरात्रि में देवी तनिक भयभीत करती हुई साधक के पास आकर हँसते-हँसते कहती हैं—तुम्हारी जो इच्छा हो माँगो। साधक मन में निश्चय करके उन्हें माता, भगिनी या भार्या में से किसी एक सम्बन्ध रखकर सम्बोधित करे। देवी से जो रिश्ता साधक रखेगा वे तदनुरूप आचरण करके उसे सन्तुष्ट करती हैं। मातृसम्बोधन द्वारा देवी अन्नादि भोजन प्रदान करके साधक का पुत्रवत् पालन करती हैं। नित्य १०० सुवर्णमुद्रा तथा नाना द्रव्य प्रदान करती हैं। भगिनी मानने पर देवकन्या, नागकन्या तथा राजकन्या लाकर उसे देती हैं। साधक को भूत, भविष्य, वर्त्तमान बतलाती हैं। भार्या का सम्बोधन करने पर विपुल धन, अन्नादि, सौ सुवर्णमुद्रा नित्य देती हैं॥ १०॥

महाविद्यां प्रवक्ष्यामि सावधानावधारय ।
कुङ्कुमेन समालिख्य भूर्जपत्रे स्त्रियं मुदा ।
ततोऽष्टदलमालिख्य कुर्यान्न्यासादिकं प्रिये ! ।
जीवन्यासं ततः कृत्वा ध्यायेत्तत्र प्रसन्नधीः ।
शुद्धस्फटिकसङ्काशां नानारत्नविभूषिताम् ।
मञ्जीरहारकेयूररत्नकुण्डलमण्डिताम् ।
एवं ध्यात्वा जपेन्मन्त्रं सहस्रन्तु दिने दिने ।
प्रतिपत्तिथिमारभ्य पूजयेत् कुसुमादिभिः ।
धूपदीपविधानैश्च त्रिसन्ध्यं पूजयेन्मुदा ।
पूर्णिमां प्राप्य गन्धाद्यैः पूजयेत् साधकोत्तमः ।
घृतदीपं तथा धूपं नैवेद्यञ्च मनोहरम् ।
रात्रौ च दिवसे जापं कुर्याच्च सुसमाहितः ।
प्रभातसमये याति साधकस्यान्तिकं ध्रुवम् ।
प्रसन्नवदना भूत्वा तोषयेद्रतिभोजनैः ।
देवदानवगन्धर्वविद्याधृग्यक्षरक्षसाम् ।
कन्याभी रत्नभूषाभिः साधकेन्द्रं मुहुर्मुहुः ।
चर्व्यचोष्यादिकं सर्वं ध्रुवं द्रव्यं ददाति सा ।
स्वर्गे मर्त्ये च पाताले यद्वस्तु विद्यते प्रिये ! ।
आनीय दीयते सापि साधकाज्ञानुरूपतः ।
स्वर्णं शतं समादाय सा ददाति दिने दिने ।
साधकाय वरं दत्वा याति सा निजमन्दिरम् ।
तस्या वरप्रदानेन चिरजीवी निरामयः ।
सर्वज्ञः सुन्दरः श्रीमान् सर्वेशो भवति ध्रुवम् ।
प्रभवेत् सर्वपूज्यश्च साधकेन्द्रो दिने दिने ।
तारं मायां च गन्धानुरागिणि मैथुनप्रिये ! ।
वह्नेर्भार्यामनुः प्रोक्तः सर्वसिद्धिप्रदायकः ।
एषा मधुमती तुल्या सर्वसिद्धिप्रदा प्रिये ! ।
गुह्याद् गुह्यतरा विद्या तव स्नेहात् प्रकाशिता ॥ ११ ॥

अब अन्य महाविद्या-साधना कहते हैं। भोजपत्र पर कुंकुम से स्त्री की मूर्त्ति अंकित करके अष्टदल कमल की रचना करे। न्यासादि करके इस मूर्त्ति में प्राणप्रतिष्ठा करके तब ध्यान करे। शुद्धस्फटिक के समान जिसकी देहकान्ति है और जो नानारत्न से विभूषित है, नूपुर, हार, केयूर, रत्नकुण्डलादि से शोभित देवी का ध्यान करके नित्य १००० जप करे। प्रतिपदा से प्रारम्भ

करके पुष्प-धूप आदि से देवी की पूजा करे। पूर्णिमा तिथि को घी का दीपक जलाकर गन्धादि से पूजन करके धूप तथा अच्छा नैवेद्य अर्पित करे। इस प्रकार अर्चना करके समस्त दिन तथा रात्रि को पुनः मूलमन्त्र का जप करे। सुबह देवी आकर रति एवं भोजन द्रव्यों से साधक को प्रसन्न करती हैं। देव-कन्या, दानवकन्या, गन्धर्वकन्या, विद्याधरकन्या, यक्षकन्या, राक्षसकन्या नाना प्रकार के द्रव्य लाकर उसे प्रसन्न करती हैं। देवी नित्य १०० स्वर्णमुद्रा साधक को देकर अपने स्थान को चली जाती हैं। इससे साधक चिरजीवी, नीरोग, श्रीमान्, सर्वज्ञ, सुन्दर तथा सबका अधिपति होकर सबका पूज्य हो जाता है। 'ॐ ह्लीं गन्धानुरागिणि मैथुनप्रिये स्वाहा'। यह मन्त्र सर्वसिद्धि देने वाला है। मधुमती मन्त्र-साधना की तरह ही इस मन्त्र को सिद्ध करे। इस अतिगुप्त मन्त्र को तुम्हारे स्नेह के कारण मैंने प्रकट किया है ॥ ११ ॥

देव्युवाच

श्रुतञ्च साधनं पुण्यं यक्षिणीनां सुखप्रदम्।
कस्मिन् काले प्रकर्त्तव्यं विधिना केन वा प्रभो !।
अत्राधिकारिणः के वा समासेन वदस्व मे।

ईश्वर उवाच

वसन्ते साधयेद्धीमान् हविष्याशी जितेन्द्रियः।
सदा ध्यानपरो भूत्वा तद्दर्शनमहोत्सुकः।
उटजे प्रान्तरे वापि कामरूपे विशेषतः।
स्थानेष्वेकतमं प्राप्य साधयेत् सुसमाहितः।
अनेन विधिना साक्षाद् भविष्यति न संशयः।
देव्याश्च सेवकाः सर्वे पञ्चरात्राधिकारिणः।
साधका ब्रह्मणो ये स्युर्न ते चात्राधिकारिणः ॥ १२ ॥

इति भूतडामरे महातन्त्रे योगिनीसाधनं नाम षोडशं पटलम्।

भैरवी पूछती हैं—मैंने सुखप्रद यक्षिणी-साधन को सुना। यह किस समय, किस विधान से तथा किस व्यक्ति द्वारा किया जाय? इसका यथार्थ अधिकारी कौन है? भैरव कहते हैं—हे देवी! धीमान् साधक हविष्य भक्षण करते हुए तथा जितेन्द्रिय होकर वसन्तकाल में यह साधना करे। सभी समय ध्यानयुक्त तथा देवी के दर्शन के लिए उत्सुक होकर चत्वर, प्रान्तर या कामरूप (आसाम का पश्चिमी भाग) किसी स्थान में संयत होकर साधना करे। पूर्वोक्त विधान से साधना करने से अवश्य साक्षात्कार होता है। देवी के सेवक ही इस साधना के अधिकारी हैं। जो देवब्रह्मोपासक हैं, उन्हें इस साधना का अधिकार नहीं है ॥ १२ ॥

भूतडामर महातन्त्र का सोलहवाँ पटल समाप्त।